||२१७||

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

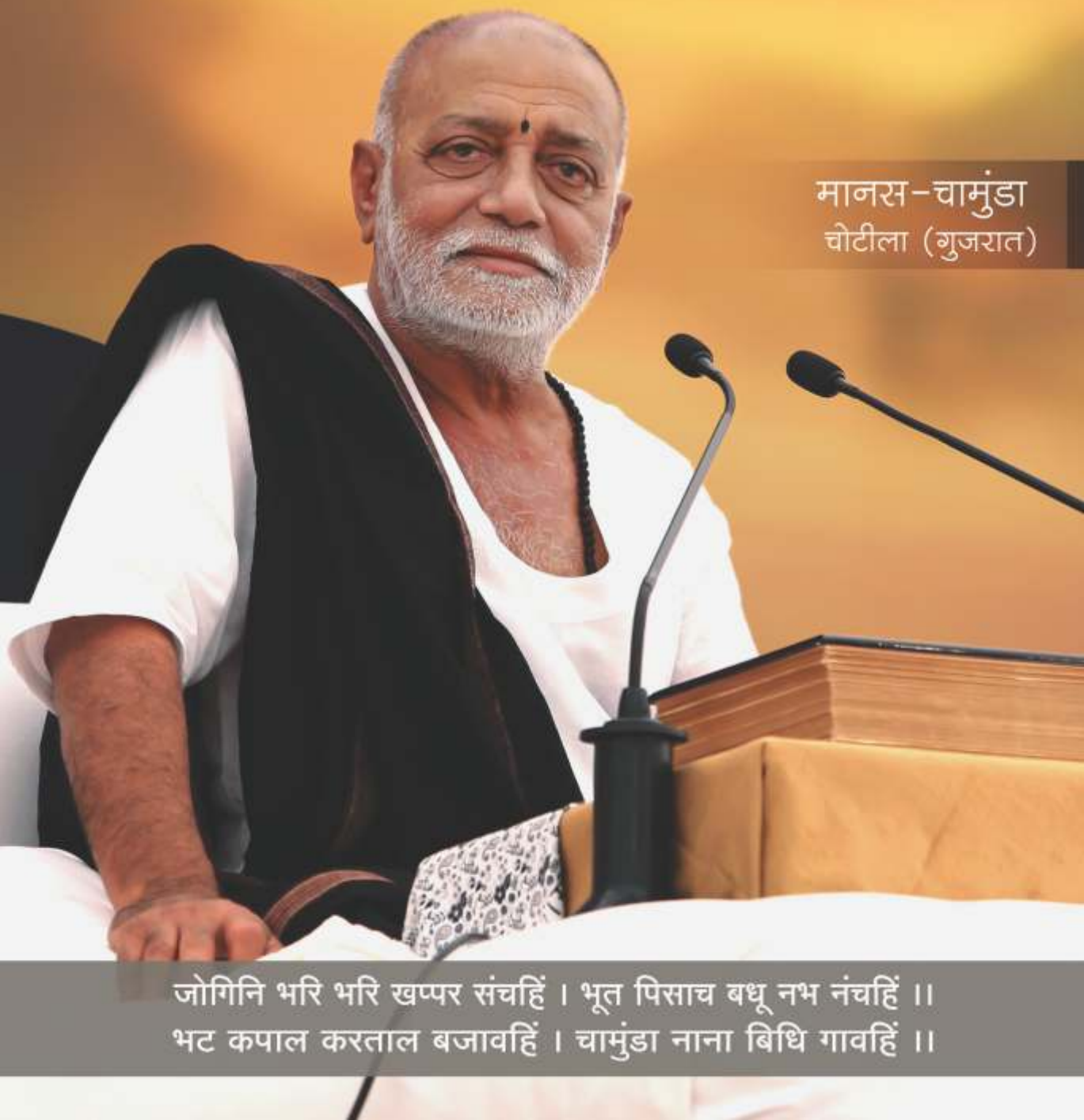

मानस-चामुंडा

चोटीला (गुजरात)

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं । भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं ।।

भट कपाल करताल बजावहिं । चामुंडा नाना बिधि गावहिं ।।

।। **रामकथा** ।।
मानस-चामुंडा

मोरारिबापू
चोटीला (गुजरात)
दिनांक : १३-१०-२०१५ से २१-१०-२०१५
कथा-क्रमांक : ७८३

प्रकाशन :
दिसम्बर, २०१६

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

हिन्दी अनुवाद
प्रो. कमल महेता

रामकथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

परम्बा भगवती माँ चामुंडा के पवित्र धाम चोटीला (गुजरात) में नवरात्रि के पावन दिनों में ता.१३-१०-२०१५ से २१-१०-२०१५ दरमियान मोरारिबापू ने रामकथा का अनुष्ठान किया।

भट कपाल करताल बजावहिं ।
चामुंडा नाना बिधि गावहिं ।।

'मानस-चामुंडा' में पसंद की गई इस चौपाई का भाष्य करते हुए बापू ने कहा कि 'मानस' की चामुंडा गाती चामुंडा है, संहार करती नहीं। अब विश्व को ऐसी चामुंडा की आवश्यकता है जो गाती हो; जिनके गायन से विश्व का कल्याण हो।

'अनुष्ठान' की अर्थ-त्रिज्या का विस्तार करते हुए बापू ने कहा कि नव दिन कथा सुनना यह भी अनुष्ठान है। चाहे वो रामकथा हो, भागवतकथा हो, देवीभागवत हो, शिवपुराण हो या किसी भी प्रकार का सत्संग हो। जिनमें से शूरवीरता या बलिदान का बोध मिले ऐसी लोकवार्ता भी अनुष्ठान है। उसमें तुम्हें कविता का स्वीकार भी करना होगा, गरबा का स्वीकार भी करना होगा; श्लोक का स्वीकार भी करना होगा; दोहे का स्वीकार भी करना होगा। ये सब शक्तिपाठ है।

शक्तिरूपेण, बुद्धिरूपेण, क्षमारूपेण, वाणीरूपेण, विद्यारूपेण, शांतिरूपेण जैसे माँ भगवती के विभिन्न रूपों या गुण-लक्षणों का बापू ने निजी अर्थघटन किया और 'इक्कीसवीं सदी में अहिंसारूपेण माँ की आवश्यकता है।' ऐसा सूत्रात्मक निवेदन भी किया। साथ ही बापू ने कहा कि माँ अहिंसारूपेण ही है, थी और रहेगी। कोई विशेष कारणवश माँ ने खड्ग लिया होगा, त्रिशूल लिया होगा। दुनिया में कोई डोक्टर हिंसक नहीं होता। ओपरेशन करने के लिए उन्हें शस्त्र लेने पड़ते है। हमारे यहां देव-देवियों के हाथ में शस्त्र दिखाया जाता है लेकिन ये शस्त्र किसी को मारने के लिए नहीं थे; किसी को कोई अकारण मारे तो उसके रक्षण के लिए ये शस्त्र थे। तदुपरांत बापू ने 'सत्यरूपेण', 'प्रेमरूपेण' और 'करुणारूपेण' देवी का दर्शन करते ऐसा भी कहा कि हमारे में जगदंबा सत्यरूप में बिराजित है; प्रेमरूप में बिराजित है; करुणारूप में बिराजित है।

बलिप्रथा एवम् बलि के नाम प्रकट हिंसावृत्ति से बाहर निकलने की बापू ने आर्द्र स्वर में अपील करते हुए निवेदन किया कि जहां-जहां बलि चढ़ाया जाता है ये बंद होना चाहिए। बलिप्रथा बंद हो ऐसी एक बावा की प्रार्थना है। और जो भी रुचिकर न हो ये अब इक्कीसवीं सदी में बंद होना चाहिए। और ये बंद करने से यदि आपको कुछ पाप लगे तो ये मुझे दे देना। ये सब मैं ले लूंगा, लेकिन जीवहिंसा नहीं होनी चाहिए। बलिप्रथा बंद होनी चाहिए।

अश्विन नवरात्रि के-दुर्गापूजा के पवित्र दिनों में एवम् माँ चामुंडा की पावन भूमि में मोरारिबापू ने किये 'मानस-चामुंडा' रामकथा के अनुष्ठान से माँ भगवती का और स्वयं कालिकारूपी-दुर्गारूपी रामकथा का महिमागान हुआ और समांतर लोकजागृति का सहज पुण्यकार्य भी हुआ।

– नीतिन वडगामा

मानस-चामुंडा : १

'मानस' के सातों सोपान के केन्द्र में शक्ति बिराजमान है

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं । भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं ।।
भट कपाल करताल बजावहिं । चामुंडा नाना बिधि गावहिं ।।

बाप! नौरात्रि के-अश्विन नौरात्रि के इस पवित्र अनुष्ठान के दिनों में परम्बा भगवती माँ चामुंडा के आशीर्वाद से उनकी छत्रछाया में इस चामुंडाधाम में रामकथा का आरंभ हो रहा है। अलग-अलग स्थानों से पधारे हुए सभी पूजनीय संत-महंत के चरणों में प्रणाम करता हूं। कर्णाटक स्टेट के राजपाल महामहिम अपने राजकोट के वजुभाई वाळा विशेषरूप से उपस्थित है; उनके साथ पधारे हुए विविध क्षेत्रों के वरिष्ठजनों का स्वागत; समस्त वसुंधरा को माँ दूर्गा की इस नौरात्रि की बधाई देकर व्यासपीठ से सभी को मेरा प्रणाम। सभी संतों की ओर से अनंत श्री विभूषित महामंडलेश्वर पूज्य भारतीजी बापू ने हमें आशीर्वाद दिए हैं। सायला महंत बापू पूज्य दुर्गादासजीबापू ने भी आशीर्वाद देकर शुभकामना व्यक्त की। महाहिमश्री ने भी अपना भाव व्यक्त किया। मेरे मन में तो बीज़रूप में यह बात बस गई थी कि एक बार माँ चामुंडा की गोद में तलगाजरडा में नौ दिनों का अनुष्ठान हो। जयंतीभाई और समग्र परिवार का मनोरथ चोटीला की कथा लेने का था। समय आया और आज से कथा का आरंभ हो रहा है। यजमान परिवार पर माताजी के आशीर्वाद है ही। माँ भगवती के चरणों में मेरी प्रार्थना कि इन पर विशेष आशिष हो। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। माँ चामुंडा माता के स्थान के पूजनीय महंत बापू, उनके समग्र परिवार ने भी बहुत प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने भी आशीर्वाद दिए। आज से हम नौरात्रि खेलने एकत्र हुए है।

मैंने विषय तो पहले ही दे दिया है। 'रामचरित मानस' में 'चामुंडा' शब्द का उल्लेख अहोभाव से हुआ है। मेरी व्यासपीठ ने निश्चय किया था कि चामुंडाधाम में माँ चामुंडा की कृपा से 'मानस-चामुंडा' का गायन करेंगे। यह गाती हुई चामुंडा है, संहारक नहीं है। शृंगार सजकर गाती चामुंडा है। अब जगत को ऐसी चामुंडा की जरूरत है जो गाती हो। जिसके गायन से विश्व कल्याण हो। संहारक जगदंबा तो भृकूटिविलास में ब्रह्मांड का नाश कर सकती है।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेषहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ।

वह परम्बा, पराशक्ति जगत में से आसुरी तत्त्वों का नाशकर सके ऐसी माता है। वे इतनी समर्थशाली है कि गाते-गाते सभी की वृत्ति सुधार सकती है। इक्कीसवीं सदी संहार की नहीं, गाने की होनी चाहिए। शृंगार की सदी होनी चाहिए। नौरात्रि में खेलैया वर्ण, वर्ग, जाति को भूलकर, जगदंबा को केन्द्र में रखकर रास खेलते हैं। हम सब नौ दिन तक माँ चामुंडा को केन्द्र में रखकर साथ-साथ गाएं। 'मानस' की चामुंडा गाती है अत: मैंने यह चौपाई पसंद की है-

भट कपाल करताल बजावहिं ।
चामुंडा नाना बिधि गावहिं ।।

यह बात मुझे विशेष आकर्षित करती है कि लंका के रणांगण में गगनगवाक्ष से माँ चामुंडा गा रही है। दोनों पंक्तियां 'मानस' के 'लंकाकांड' में से ली है। 'लंकाकांड' में रावण मूर्च्छित होता है। उसे लंका ले आते हैं। सुबह रावण ने यज्ञ करने का विचार किया। यज्ञ संपन्न हो तो राम भी मुझे मार न सके। यज्ञ का आरंभ होता है। विभीषण को यह जानकारी मिलती है। उसने भगवान राम से निवेदन किया, प्रभु दशकंधर यज्ञ आरंभ कर रहा है। यदि यज्ञ पूर्ण हो जाय तो भी आप को कोई मुश्किल नहीं पर रावण के निर्वाण करने में तकलीफ़ होगी। अत: रामसेना में से वरिष्ठ सेवक जाते हैं। रावण खड़ा हो जाता है फ़िर घमासान युद्ध शुरू किया। गोस्वामीजी ने इसका अद्‌भुत वर्णन किया है। आकाश में अनोखा वातावरण छा गया। मुझे पता नहीं था कि भूत भी शादीशुदा होते हैं! जब से 'रामायण' हाथ में लिया है; और आज तो नौरात्र अनुष्ठान के दिन में ये छोटी-छोटी चेतनाएं स्वयं 'रामायण' को आत्मसात् कर रही है। मेरे लिए तो यह चरम खुशी है। रामकथा स्वयं कालिका है। रामकथा स्वयं दुर्गा है। रामकथा स्वयं भगवती है। तुलसीदासजी ने लिखा-

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ।

जोगिनियां खप्पर भर-भर खेलती हैं। 'भूत पिसाच बधू।' भूत और पिशाच कहीं पर रुके हुए थे। कहीं किसी गोद या घट में! आसपास कहीं व्यस्त होंगे! सो उस समय उनकी बधूएं, स्त्रीयां आकाश में नाचती है, खेलती है। उस समय वाद्य कौन-से थे?

भट कपाल करताल बजावहिं ।

जिसे बजाना ही हो, गाना ही हो, नाचना ही हो, उत्सव मनाना ही हो उनके हाथ में जो कुछ आ जाय वह वाद्य बन जाता है। जो बिगाड़ना ही चाहता है, समाज को बेसूरा करना चाहता है उसके हाथ में सितार दे तो वह हथियार बन जाता है। साहब, यह निश्चित किया प्रोग्राम नहीं था। कोई तारीख नहीं थी। रावण यज्ञ में से बाहर निकला। घमासान युद्ध करने आया। फ़िर जो युद्ध हुआ उसमें सभी नृत्य करने आए, खेलने आए, अचानक आए। फ़िर क्या बजाना? तो 'भट कपाल' शूरवीरों के जो कपाल थे उसे हाथ में पकड़ और 'करताल बजावहिं।' उसमें से संगीत हुआ। ताल बने। फ़िर लय बना। उस समय ऐसा उत्सवपूर्ण वातावरण देखकर-

चामुंडा नाना बिधि गावहिं ।

भगवती चामुंडा विविध प्रकार के झिंझिया गवाती है। तीसरी बार कहूं, इक्कीसवीं सदी गाने की है। माँ के इन पवित्र दिनों में हम माँ के बारे में थोड़ी बातें करेंगे रामकथा के माध्यम से। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। माँ के दरबार में तो आनंद-मंगल है ही। इसके साथ-साथ एक दूसरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मैंने कल माँ के दर्शन किए। मेघाणी के दर्शन भी किए। वे जबरदस्त राष्ट्रीय शायर है। हम सब के लिए वे साहित्य-तीर्थ है। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। ये दो पंक्तियां 'लंकाकांड' से ली है इसके आधार पर हम शक्तितत्त्व पर थोड़ा विचार करेंगे।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्ये नमस्तस्यै नमो नम:।।

ऋषिमुनिओं, सूत्रकारों और देवताओं ने माँ के कितने रूप हमारे सामने रखे! कभी शक्तिरूपेण, कभी बुद्धिरूपेण, क्षमारूपेण, करुणारूपेण, विद्यारूपेण तो कभी शांतिरूपेण। प्रथम दिन में शक्तिरूपेण की बात करेंगे। हरिइच्छा अनुसार कल दूसरा रूप लेंगे। पहले 'शक्तिरूपेण संस्थिता।' मैंने चोटीला में माताजी के दर्शन कभी नहीं किए थे। शायद एक बार आया था, पर याद नहीं। कल ऊपर जाकर माताजी के दर्शन किए। पैदल जाता तो झिंझिया न खेल पाता। अत: डोली में बैठकर गया। थोड़ी पायदान चढ़ने से पींड़ी में दर्द शुरू हो गया। मानो कहने लगी, 'साधु बाबा, रहने दो। कल दर्द शुरू होगा। चौबीस घंटे बाद असर होगी। जोख़िम मत ले। डोली में बैठकर गया। माँ के दर्शन किए। बहुत खुश हूं। शाहबुद्दीनभाई, लौटते समय देखा कि आवेश में सिर हिलाते कोई उत्तर गुजरात में से तो कोई कहीं ओर से आये हैं। कई लोग अभुआते थे! मुझे लगा, माताजी की भक्ति का जो ऐसा भाव है वो मुझमें न आ जाय तो अच्छा रहे, पर मैंने अपने आप को बचा लिया।

मुझे आनंद है कि यहां पवित्र वातावरण है। मैं व्यासपीठ से पूरे देश से प्रार्थना करूं कि इन दिनों बलि चढ़ाने बंद होने चाहिए। जो इक्कीसवीं सदी में अरुचिकर है, बंद हो जाना चाहिए। यह बंद होने से जो भी पाप लगे मुझ पर लगे। मैं संतों की उपस्थिति में बिनती करता हूं कि वो सब मुझे दे दें। अपने गुरु की कृपा से मैं अपने मज़बूत कंधे पर बोझ उठा लूंगा। पर जीवहिंसा नहीं होनी चाहिए। बलिप्रथा बंद होनी चाहिए। पूज्य महामंडलेश्वरजीबापू ने और महामहिमश्री ने भी दो शब्द 'फेशन' और 'व्यसन' दिए। आज व्यसन खत्म हो जाय तो माँ ज्यादा प्रसन्न होगी।

साहब, यह नौरात्रि क्या है? गर्मी के दिनों में पवन बंद पड़ जाय तो हम क्या कहे? जरा भी हवा नहीं है। पवन पड़ गया है। पवन पड़ जाय तो हम भी पड़ जाय! पवन पड़े नहीं, चारों ओर जाय। पवन बंद नहीं होता, स्थगित हो गया है या गतिशील नहीं है। फ़िर हम पूठ्ठा लेकर स्थगित पवन को गतिशील करते हैं। सब के चारों ओर आंतर्-बाह्य शक्तितत्त्व पड़ा है। ये नौ दिन शक्ति को गतिशील बनाने के दिन है, प्रवर्तमान करने के दिन है, माँ अंबा-भवानी की शुद्ध उपासना के लिए बिनती करता हूं। मुझे आनंद है कि प्रतिभाव अच्छा मिला है। हमारा एक देवीपूजक का पुत्र है। उसके बापू ने उसे तलगाजरडा ले जाने के लिए कहा। बेटे ने कहा, आप बलिप्रथा बंद करो तो आप का तलगाजरडा में प्रवेश हो सकेगा। मैं उसकी हिम्मत देखकर खुश हुआ। उनके बाप ने कहा, 'दो-तीन नौरात्रि जाने दे फ़िर धीरे-धीरे बंद करता हूं।' प्रतिभाव अच्छा मिल रहा है।

जितनी अनावश्यक बस्तु उपासना में जुड़ी हुई है उन से हम मुक्त होंगे तो माँ का प्रागट्य ज्यादा रहेगा। हम उनको ज्यादा महसूस करेंगे। हम बेहोशी के आलम में जी रहे हैं। संतों ने भजन लिखे। महात्मा-भक्तों ने गाये। विद्वानों ने प्रवचन किए। शास्त्रकारों ने शास्त्र दिये। कथा-गायन हुआ। अनेक कार्यक्रम हुए। सब को जाग्रत करने के निर्मल प्रयत्न हुए। फ़िर भी हमें और ज्यादा जागना है। इन पवित्र दिनों में हमारी जागृति ज्यादा होगी तो मुझे लगता है यह विश्व ज्यादा सुंदर ही दिखेगा। अधिक आनंद मिलेगा। यह संसार बहुत सुंदर है। पृथ्वी का ग्रह सुंदर है। संतो, भक्तों, ऋषिमुनिओं ने दैवी विचारों ने अपने-अपने क्षेत्रों में इस पृथ्वी को सजाने-संवारने का कार्य किया है। उससे भी ज्यादा देदीप्यमान करे। ये ऐसे पवित्र दिन है। मूर्छा में से बाहर आने के दिन है। ये होश में आने के दिन है। झिंझिया ताल में लेना हो, लय में स्टेप्स लेने हो, सूर में झिंझिया गाना हो, गवाना हो तो आदमी होश में होना चाहिए। बेहोश कुछ भी न कर पाएं। इन दिनों हम विशेब जागृति प्राप्त करें। माँ हमें मदद करे ऐसी प्रार्थना करें।

माँ शक्तिरूपिणी है। हमारे भीतर की शक्ति को जागृत करनी है। ज्यों पूठ्ठा हिलाना पड़े, पंखा शुरू करना पड़े जिससे हवा का अनुभव कर सके। शक्ति के बगैर कौन है? दुर्गापूजा के दिनों में शक्ति को गतिशील करने के लिए हम अनुष्ठान करते हैं। इनमें से एक अनुष्ठान रामकथा है। शक्ति कितने प्रकार की होती है? हमारे

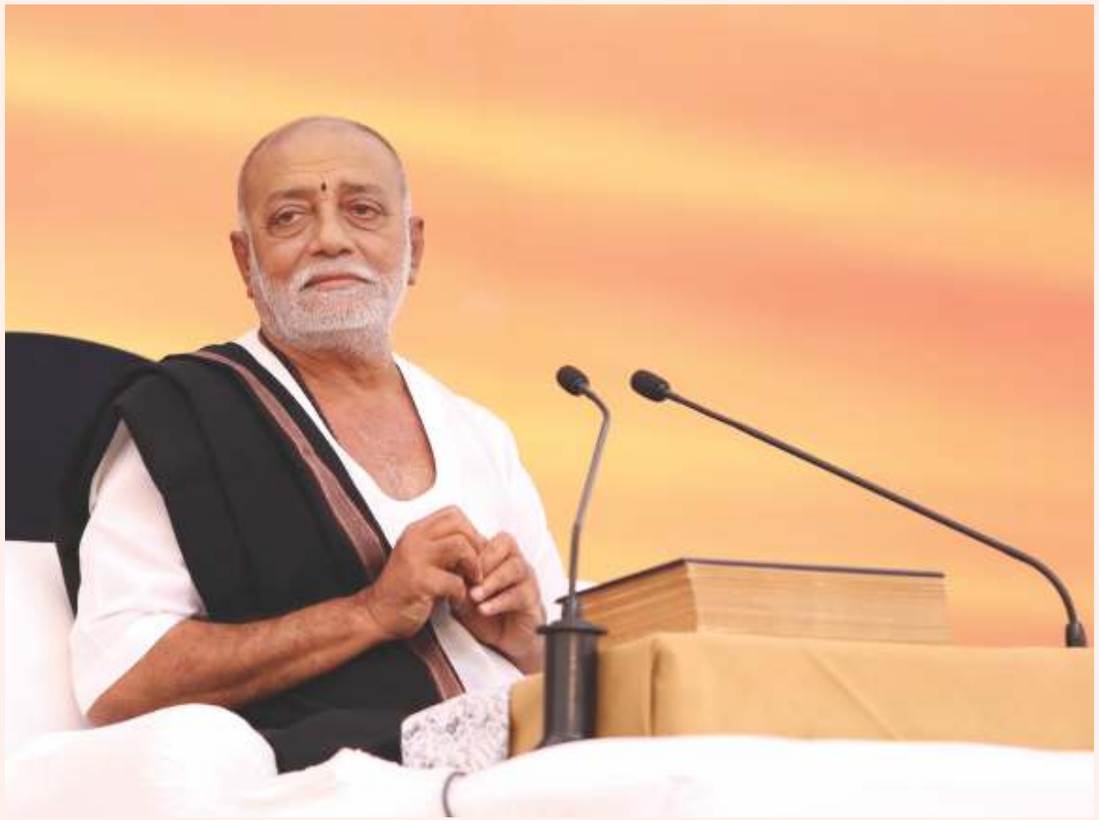

ग्रंथकार कहते हैं कि तू शक्तिरूपेण है। कितकितने रूप दिखाई देते हैं! 'रामचरित मानस' में से शक्तिस्वरूप लें-

आदि सक्ति जेहिं जग उपजाया ।

आदि शक्ति। संस्कृत स्तोत्र हम जानते हैं। हम सब गाते हैं -

जय आद्या शक्ति माँ जय आद्या शक्ति,
अख़िल ब्रह्मांड निपाव्या...
ॐ जय आद्या शक्ति, माँ जय आद्या शक्ति...

जगत को उत्पन्न करनेवाली आदिशक्ति। दूसरी है महाशक्ति। तीसरी शिवशक्ति है। चौथी ज्ञानशक्ति है, विचारशक्ति है। बुद्धत्व की शक्ति ये भी ज्ञान की शक्ति है। शंकराचार्य कहते हैं, 'ज्ञानशक्तिश्च कौशल्या।' जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं, 'रामायण' में भगवती कौशल्या ज्ञानशक्ति का प्रतीक है, एक क्रियाशक्ति है। हरएक की क्रियाशक्ति अलग-अलग होती है। मेरी और आपकी काम करने की शक्ति अलग-अलग होती है। हर एक की पात्रता और औकात अनुसार होती है। एक दिव्यशक्ति है। इसमें अलग रूप से दिव्य लक्षण होते हैं। एक पराशक्ति है। भारतीय ऋषि इसे वंदन करते हैं। आदिशक्ति, महाशक्ति, ज्ञानशक्ति, शिवशक्ति, कितने रूप है माँ भगवती के! हमारे भीतर कुछ न कुछ पड़ा है इन्हें खोजने के ये पवित्र दिन है। उन्हें गतिशील करने का यह समय है।

'मानस-चामुंडा' की छोटी-सी भूमिका बांधकर कथाक्रम बना लूं ताकि आगे खेलना सरल हो जाय। फ़िर हम मुक्तरूप से खेल सके। शक्तितत्त्व के जितने रूप है उन्हें हम धीरे-धीरे हमारे आंतरिक विकास और विश्राम के लिए देखें। चामुंडा ने गाया, जोगिनी ने नृत्य किया। भूत पिशाच की बधूओं ने रास खेला। धरती का स्टेज छोटा पड़ा तो उन्होंने गगन में रास खेलना शुरू किया। मैंने दुर्ग की कथा में कहा कि दुर्ग की सीमित सीमा होती है। दुर्ग मानी किल्ला। दुर्ग की सीमा सीमित होती है, दुर्गा असीम है। अत: प्रत्येक स्टेज छोटा पड़ता है। भगवती चामुंडा वहां गाती है और गगन में रास खेलती है। तो सवा भगत भी निमंत्रण देते हैं-

गगन गढ़मां रमवाने आवो...

रामकथा का एक क्रम है। मेरी दृष्टि से 'बालकांड' में प्रधानशक्ति पराम्बा भवानी है। जिसके केन्द्र में पार्वती है। बिना पार्वती के रामकथा आगे न बढ़ पाती। समग्र 'बालकांड' के केन्द्र में शक्ति पार्वती है। समग्र 'अयोध्याकांड' की केन्द्रीय शक्ति माँ जानकी है। 'अरण्यकांड' के केन्द्र में माँ शबरी है। एक बूढ़ी बाई बैठी है। जिसकी भक्ति जवान थी। 'किष्किन्धाकांड' में थोड़े समय के लिए आया हुआ पात्र तारा है। तारा केन्द्रबिन्दु है। 'सुन्दरकांड' का केन्द्रबिंदु स्वयंप्रभा है। स्वयंज्योति केन्द्रबिंदु है। ऋषिमुनिओं ने भी कहा है कि 'लंकाकांड' के केन्द्र में मंदोदरी है। 'उत्तरकांड' की केन्द्रीय शक्ति स्वयं कथाभगवती है।

'मानस' के सभी सात सोपानों के केन्द्र में शक्ति बिराजमान है। उसके आसपास लीलाएं हो रही है। इस में से जगत को अमृत मिला। उसी में से जगत को प्रकाश प्रकाश मिला। अभय प्राप्त हुआ। प्रसन्नता प्राप्त हुई। निर्वाण प्राप्त हुआ। जो चाहा सो मिला। जिसके सातों सोपानों में शक्ति केन्द्र में है। तुलसीदासजी ने रामकथा का आरंभ सात मंत्रों से किया है। किसीने कहा, मंगलाचरण के सात श्लोक संगीत के सात सूर है। किसीने कहा, सप्तसिंधु का प्रतीक है। 'रामायण' के संतों का कहना है कि सातों मंत्र 'रामचरित मानस' के एक-एक सोपान का प्रतिनिधित्व करते हैं। तुलसी ने 'मानस' के आरंभ में एक-एक कांड का एक टाइटल सोंग हो ऐसे सात प्रतिनिधित्व करते मंत्र लिखे। प्रथम मंत्र-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

अपने यहां नवदुर्गा में तीन महादेवियाँ कहलाई महालक्ष्मी, महाकालि, महासरस्वती। तुलसीदासजी ने सात मंत्रों में 'रामचरित मानस' के प्रथम सोपान का जब मंगलाचरण किया उसमें तीनों महाशक्तियों का स्मरण किया। सात मंत्रों में मंगलाचरण किया। ग्रंथ का हेतु समझाया। स्वान्त: सुखाय उद्देश्य था। साहब, कथाने कितने रूप बदले हैं! मैं पचपन साल से देख रहा हूं। हमारे सामने कितने रूप आए! साहब! लोग थके नहीं। लोग श्रवण करना चाहते हैं। यजमान का भी क्या मनोरथ है? बस, आनंद हो। यजमान के तन-मन का मोक्ष हो। धन का भी मोक्ष हो। तीनों का मोक्ष हो। कथा के सिवा धन का मोक्ष कहां हो? हमने धनमोक्ष के ये सभी प्रयत्न शुरु किए हैं! जिसके पास हो वे मैदान में आए। आप नहीं कर पायेंगे। साधु करवा देंगे। फिर से कहता हूं, साधु को साधन मत बनाईए। यह साध्य है। साधु अपना लक्ष्य है। साधन मत बनाईए। जिस दिन साधु को साधन बनाते हैं उस दिन संस्कृति आक्रंद करती है। साधु साधन नहीं है।

सात मंत्रों में मंगलाचरण किया। अपने यहां मंगलाचरण की महिमा है। किसी शास्त्र का आरंभ हो तब उच्चारण से भी ज्यादा मंगल आचरण की स्थापना होती है। उच्चारण नहीं, मंगल आचरण। आरंभ आचरण

से हुआ। सात मंत्रों में मंगलाचरण हुआ है। तुलसी ने यह श्लोक लोक तक पहुंचाया। आखिरी आदमी तक, सामान्य जन मन तक भगवत् कथा आत्मसात् हो अत: संस्कृत जैसी देववाणी, ऋषिवाणी, वेदवाणी को प्रणाम कर, हृदयपूर्वक आदर देते हुए तुलसी ने लोकबोली में रामकथा का आरंभ किया है। उन्होंने पांच सोरठें देहाती भाषा में, ग्राम्यगिरा में, भोजपुरी में या उस समय की प्रचलित भाषा में जो लोककंठ में होगी उसे पकड़कर पांच सोरठें में समन्वय किया है। गणेश, भगवती दुर्गा, भगवान शिव, भगवान विष्णु और भगवान सूर्य को याद किया जिनका सर्वव्यापी स्वरूप है। तुलसदासजी की गणेशवंदना में कुछ धर्म का देव है ऐसा भाव नहीं है। गणेश माने विवेक देवता। मैंने रिपोर्ट पढ़ी है कि विनायक मंदिर के पास एक मुस्लिम परिवार ने महाराष्ट्र में किसी जगह शिशु को जन्म दिया और नाम गणेश रखा है। हमारा देश भेदभाव का नहीं है। मैं उस माता को सलाम करता हूं। उस धर्मावलंबी को नमन हो जो अपने पुत्र का नाम गणेश रखती है। गणेश का अर्थ व्यापक है। गणेश माने विवेकरूपी पदार्थ जिसका सभी स्वीकार करते हैं। तुलसी ने सूर्योपासना की बात की। शंकराचार्य ने की। प्रकाश को कौन रोक सके? सूर्य सब का है। बिनसांप्रदायिक है। चंद्र भी बिनसांप्रदायिक है। सितारें, आकाश, धरती सभी बिनसांप्रदायिक है। फिर भवानी वंदना। भवानी माने श्रद्धा। साहब, बिन श्रद्धा के एक पल भी जी न सके। अंधश्रद्धा जरा भी नहीं होनी चाहिए। हाथ जोड़ता हूं, अंधश्रद्धा को छोड़िए। बिना श्रद्धा कैसे जियें?

श्रद्धानो हो विषय तो पुरावानी शी जरूर?
कुरआनमां तो क्यांय पयंबरनी सही नथी।
-जलन मातरी

श्रद्धा होनी चाहिए, पर अंधश्रद्धा बिलकुल नहीं साहब! अंधश्रद्धा मृत्यु है, श्रद्धा जीवन है। भवानी माने श्रद्धा। बहुत ही विशाल अर्थ में समन्वय है। विष्णु माने व्यापकता। संकीर्ण विचारधारा नहीं, व्यापक विचारधारा। पांच देव याद किए। ये सार्वभौम देव है। यह विशाल अर्थ में है। मैं इसका गलत अर्थघटन नहीं करता। यह हकीकत है। अंत में तुलसीदासजी गुरुवंदना करते हैं-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरुवंदना की। एक सोरठे में गुरु परिचय की एक फार्म्यूला तुलसीदासजी ने दी। परिचय की प्रथम पायदान 'बंदउँ गुरु पद कंज।' जिसके चरण कमल है, जिसका आचरण राग-द्वेष मुक्त है। कमल की तरह असंग है। यह पहला लक्षण है। दूसरा लक्षण 'कृपा सिंधु नररूप हरि।' उसके पास कृपा ही होती है, कठोरता नहीं। मनुष्य के आकार में हमें ऐसा लगे कि साक्षात् बुद्धत्व उतरा है। साक्षात् हरि उतरा है। ऐसा हमें अनुभव होता है। हमारे भयानक मूढतारूपी अंधकार में जिनके वचन, सुवाक्य, मंत्र प्रकाश फैला दे। भीतरी अंधकार का नाश कर दे ऐसे लक्षण जिनमें हो उसे गुरु कहते हैं। जगत में गुरुतत्त्व यह है जिसका पार नहीं नहीं मिलता-

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,
प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीए...

गुरु की महिमा अद्भुत है जो चार सूत्रोमें ही है। तुलसी को लोकबोली में शास्त्र की रचना करनी है तो उन्होंने चौपाई का आधार लिया है। चोपाई का आधार लिया है। चोपाइयों का सर्जन किया है। 'बालकांड' की प्रथम पंक्ति-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा ।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ।।

पहले दोहे में फिर आगे दो पंक्तियों में तुलसी ने गुरुवंदना और महिमा की है। मैंने भी स्वीकार किया है। मुझे तो हर कदम पर गुरु की जरूरत पड़ती है। जिसको न हो उस पर दबाव नहीं डाल सकते। मुझे तो गुरु चाहिए। गुरु किसी

को परतंत्र नहीं करता कि मेरा अन्धानुकरण कीजिए। मुझे ही फोलो कीजिए ऐसा नहीं। तथाकथित गुरु की बात ओर है! हमारे दलपतसाहब कहते हैं, गुरु कमजोर हो सकता है, गुरुपद नहीं। तुलसी सतत 'गुरुपद' शब्द का पुनरावर्तन करते हैं। गुरु की महिमा अद्भुत है। माता-पिता को गुरु माने। शिक्षक-मित्र-ग्रामीण हो तो उसे भी गुरु मान सकते हैं। हृदय में विशालता हो, झूठी सनसनाहट न हो तो घरवाली को भी गुरु मान सकते हैं। वहां जाति-वर्गभेद नहीं है। स्त्री-पुलिंग भेद नहीं है। गुरुतत्त्व विशाल है।

साधुचरित समाज की वंदना की। उनको चलता-फिरता प्रयाग कहा। यह चलता-फिरता तीर्थराज है। साधु-संतों की वंदना की। अब तुलसी की आंख पवित्र हो चुकी है। अत: दुर्जन दिखना बंद हो गया। कोई दुर्जन नहीं है। अत: राक्षसों की वंदना की है। तुलसी ने समस्त जगत ब्रह्ममय देखा। सब को प्रणाम किया।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

गोस्वामीजी ने हनुमानजी की वंदना की। हनुमानजी प्राणतत्त्व है। उसके बिना हम जी नहीं सकते। मैंने अनेक बार कहा है कि हनुमानजी की वंदना कोई भी कर सकता है। स्त्री-पुरुष का भेद हनुमानजी कभी नहीं करते। 'हनुमानचालीसा' या हनुमानजी की आरती बहनें न कर सके ऐसा नहीं है। यह किसने किया उस आदमी को मैं ढूंढ रहा हूं! पचपन साल हो गए पर अभी तक लापता है! हनुमान प्राणतत्त्व है। अद्भुत तत्त्व है। इसीलिए उनके आश्रय में सभी जा सकते हैं। 'रामचरित मानस' में यदि लंका की राक्षसियां हनुमानजी की पूजा कर सकती हो तो मेरे देश की बहन-बेटियां क्यों न कर सके? उन्हें स्वतंत्रता देनी चाहिए। मुक्तता देनी चाहिए। बेवजह के बंधन इक्कीसवीं सदी में निकाल देने चाहिए। ऐसा साहस न कर सके तो कम से कम हलके तो कर सके। अब ये पाबंदियां नहीं होनी चाहिए। हनुमंततत्त्व हम सब का तत्त्व है। 'विनयपत्रिका' की दो पंक्तियां-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
बंदौ राम-लखन-बैदेही।
जे तुलसी के परम सनेही।।

श्री हनुमानजी महाराज की वंदना की। सखाओं की, सीता-रामजी की वंदना और फिर रामनाम की महिमा और नामवंदना। तुलसी ने ऐसा क्रम लिया है जिसकी चर्चा कल करेंगे।

इस व्यासपीठ पर से मैं समस्त देश को प्रार्थना करूं कि जहां-जहां बलि चढ़ाया जाता है, बंद होना चाहिए। यह एक साधु की प्रार्थना है। मैंने कई बार सिर पर जोखिम उठाया है। सभी बलि प्रथाएं बंद होनी चाहिए। जो-जो अरुचिकर हो वो इक्कीसवीं सदी में बंद हो जाना चाहिए। ये बंद होने से जो भी पाप लगे ये सब मुझे दे दीजिए। मैं संतों की उपस्थिति में झोली फ़ैलाता हूं कि ये सब मुझे दे दीजिए। गुरुकृपा से मैं अपने मजबूत कंधों पर उठा लूंगा। यह जीवहिंसा नहीं होनी चाहिए। बलिप्रथा बंद होनी चाहिए।

नौ दिनों की कथा सुननी यह भी एक अनुष्ठान है

कई जिज्ञासाएं हैं। कई बातें जानने के लिए पूछते हैं। मैं जितना जानता हूं उतना कहूंगा। बाकी आपकी बातों का जवाब न मिले तो समझना इनके उत्तर बापू नहीं समझते। हम सर्वज्ञ है ऐसा भ्रम नहीं होना चाहिए। उपनिषद कहते हैं कि जो स्वीकार कर ले कि मुझे कुछ नहीं आता, इसके जैसा सयाना और कोई नहीं है। गुरुकृपा, शास्त्रदर्शन, संतों के संग से जो समझ में आया है वही कहूंगा।

'बापू, जय सीयाराम। भजन भगवान तक कब पहुंचे?' मेरी दृष्टि से भजन साधन नहीं, साध्य है। भजन हमारा लक्ष्य है। जिस माध्यम से भी पहुंचे। भजन भगवान तक कब पहुंचे यह बात ही छोड़ दीजिए। भजन ही प्राप्त करें। भगवान तो भजन का छोरु है। भगवान के छोरे का नाम भजन है। भजन माने प्रेम, भजन माने सत्य और भजन माने करुणा। 'रामचरित मानस' में लिखा है, 'प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।' भजन से ईश्वर का प्रागट्य होता है। भजन साध्य है। भगवान उसके पीछे-पीछे आता ही है। फिर वह भजन चाहे माँ का हो या अन्य का। भजन को साधन मत बनाइए। साधु को भी साधन मत बनाइए। साधु समाज का हृदय है, लक्ष्य है। वह समाज का आखिरी मुकाम है। साधु की जाति नहीं होती। मैं आकाश से ज्यादा विशाल अर्थ में 'साधु' शब्द का प्रयोग करता हूं।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।

अमुक शक्तियों की बात केवल स्मरण तक हमने संवाद में ली कि पराशक्ति, महाशक्ति, आदिशक्ति, अनादिशक्ति, ज्ञानशक्ति ऐसी कई शक्तियां हैं। पर मूल एक 'शक्ति' शब्द 'रामचरित मानस' में शस्त्र के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रचंड शक्ति एक शस्त्र का नाम है। शक्ति माने शस्त्र। शक्ति माने शास्त्र। 'देवीपुराण' या 'देवीभागवत' को अपने यहां प्राचीन काल में शक्तिशास्त्र कहा है। 'देवी भागवत' माने शक्तिशास्त्र। शस्त्र भी बड़ी शक्ति है, उसी तरह शास्त्र बड़ी शक्ति भी है। जिस माँ की गोद में हम बैठे हैं माँ चामुंडा, नवदुर्गा अथवा महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती जो भी कहे वह भी महाशक्ति, पराशक्ति, आदिशक्ति या शास्त्र और शस्त्र से पर शक्ति है। वहां शास्त्र के हाथ नहीं पहुंच पाते। शस्त्ररूप में शक्ति, शास्त्ररूप में शक्ति, उससे बढ़कर जो पराशक्ति है उससे पर है। यह सब उसकी शरण में है। ऐसी माता जो टीले पर बैठी है वह चामुंडा है, परमदुर्गा है, उमा है। वह 'रामायण' की भवानी है, अंबिका है। प्रथम शैलपुत्री है। पर्वत की पार्वती है, शैलकुमारी है। हिमालय के घरमें पुत्री का जन्म हुआ। नारद आए। हिमालय और महारानी मैना ने उनसे निवेदन किया कि हमारे यहां बड़ी उम्र में पुत्री जन्म हुआ है, आप नामकरण कीजिए। तुलसीदासजी ने स्पष्ट लिखा है कि 'नाम उमा अंबिका भवानी।' तीन नाम उमा-अंबिका-भवानी हुए। एक दिन शंकरदादा कैलास पर बैठे थे। भवानी पास में बैठ गई। जिज्ञासा की, 'भगवन्, मेरे गुरु ने मेरे तीन नाम किए-उमा, अंबिका और भवानी। पर 'रामायण' में आप पहला नाम क्यों ज्यादा लेते हैं? भवानी नाम कम लेते हैं। अंबिका भी नहिवत् लेते हैं। आप 'उमा' नाम ही ज्यादा लेते हैं।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ।
सत हरि भजनु जगत सब सपना ।।

जो नजदीक के हो उसे ही अनुभव कह सकते हैं, हर एक को नहीं। भगतबापू कहते हैं, मेरे खजाने में ढेर सारे पैसे हैं। पर ये चाबियां किसे सोंपू? यह गुच्छा किसे दूं? जिस महापुरुष में ऐसी सजर्कता हो जो दुनिया के ताले तोड़ डाले पर उसे तकलीफ़ यह है कि मैं यह चाबियों का गुच्छा किसे दूं? अनुभव किसे कहे? केवल करीब ही नहीं, एक जैसा ही हो उसे अनुभव कह सकते हैं, जहां-तहां नहीं कहना है। शास्त्र में लिखा है, शरणागत तीन बार रोते-रोते पूछे तब बुद्धपुरुष को जवाब देना चाहिए। नहीं तो हमें क्या पता चले? हमारी कसौटी करने हेतु भी पूछते हो! कई चिठ्ठियां तलगाजरडा की कसौटी करने के लिए आती है! कैसे-कैसे सवाल पूछे हैं? पूछा है कि आप कभी चंडीपाठ करते हैं? हां, मेरा चंडीपाठ 'रामायण' है। साहब, आप तो एक नौरात्रि मनाते हैं। मुझे तो महिने में दो बार नौरात्रि होती है। मुझे तो रोज चंडीपाठ है। इसका मर्म यह है कि चंडीपाठ करते हो उसे ही चंडी पर बोलना चाहिए! थोड़े शांत हो जाइए! आप संस्कृत में दुर्गापाठ-सप्तपदी जानते हो तो अवश्य करें। उसमें अद्‌भुत शक्ति है। मैं भी उसका थोड़ा पाठक-श्रावक हूं। पर मेरे लिए यह ('रामायण') शक्तिपाठ है।

एक ग्रामीण महिला ने पूछा है, 'बापू, हम अनुष्ठान नहीं जानते। आपने कहा, तलगाजरडा मानता है कि एक बार अनुष्ठान करना चाहिए। यह कैसे?' 'नौ दिनों की कथा शांति से सुने यह भी अनुष्ठान है। आप मेरी कथा सुने इसलिए नहीं कहता हूं। मुझे भीड़ का क्या है? मैं अकेला ही भीड़ से घिरा हूं। अब इसमें कुछ भी समा नहीं सकता। साहब, मुझे भीड़ से क्या लेना-देना? मजबूरसाहब कहते हैं-

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।

भागवतकथा, देवीभागवत, शिवपुराण, रामकथा या किसी भी प्रकार का सत्संग हो जिसमें शूरवीरता और बलिदान की सीख मिले ऐसी लोकवार्ता हो यह भी अनुष्ठान है। भेद नहीं करना चाहिए। इक्कीसवीं सदी में महानता और हीनताभरी बातें नहीं चलेगी। ये सब बिछड़ जायेंगे। यहां आप को कविता का भी स्वीकार करना होगा। झिंझिया का भी स्वीकार करना होगा। श्लोक, ऋचा, ब्याह के गीत, दोहे सब को स्वीकारना होगा। कोई परहेजी नहीं चलेगी। ये सभी शक्तिपाठ है। यह सरल शक्तिपाठ है। संस्कृत हमारे लिए कठिन है। जानकारी न हो तो गलत अर्थ होते हैं। रामकथा सुनिए, भगवान की कथा सुनिए, कोई अच्छी कहानी सुनिए, ये सभी अनुष्ठान है।

पार्वतीजी ने शिवजी से पूछा, मेरे गुरु ने उमा, अंबिका और भवानी तीन नाम दिये उसमें आप विशेषरूप से उमा नाम क्यों बोलते हैं? फिर शिव ने विस्तार से बात की। 'अरण्यकांड' में राघवेन्द्र की प्रतिज्ञा है कि समस्त पृथ्वी को राक्षसहीन कर दूंगा। एक-एक महात्मा के आश्रम को सुख से भर दूंगा। ऐसी गौरवपूर्ण गर्जना कर राघवेन्द्र पंचवटी की कुटिया में आते हैं। राम के चेहरे पर ज्यादा गौरव देखकर जानकीजी पूछती है, 'भगवन्, क्या कोई विशेष घटना घटित हुई है?' 'हां, देवी, मैंने प्रतिज्ञा की है।' 'कौन सी प्रतिज्ञा?' 'मैं राक्षसों का सर्वनाश करूंगा। पृथ्वी और ऋषिमुनिओं को दुःखमें से मुक्त करूंगा।' जानकीजी का चेहरा बुझ गया! 'प्रतिज्ञा करने से पूर्व मुझे पूछना तो चाहिए था! क्या ये राक्षस हमारे बच्चें नहीं है?' यही चामुंडा है। यही भवानी है। जगदंबा है। 'क्या केवल देवता ही मेरे पुत्र है? मैं तो समस्त जगजननी हूं। मुझसे पूछे बिना आपने यह प्रतिज्ञा की? क्या रावण मेरा पुत्र नहीं है? रावण के हृदय में मैं बैठी हूं। जिस दिन आप रावण को मारेंगे, बीच में यह प्रतिज्ञा

आयेगी। आप खिसियाने पड़ जायेंगे। आप जब धनुष पर बाण चढायेंगे तब उसके भीतर में बैठी मिलूंगी। प्रहार करके देखियेगा।' जानकी ने कहा। 'उ' तो एक स्पष्ट मंत्र नहीं है। मूल तो आदिशक्ति का नाम माँ है। मैं ही वह पराम्बा हूं। 'उद्भवस्थिति संहारकारिणी' हूं। 'उमा' शब्द वहीं से आया है। अत: आप का माँ कहना मुझे बहुत पसंद है। अत: मैं आपका 'उमा' संबोधन ज्यादा करता हूं। बाद में 'भवानी' और 'अंबिका' संबोधन करता हूं।

शस्त्र के रूप में शक्ति; शास्त्ररूपी शक्ति। सब से ऊपर है जहां किसी का हाथ न पहुंचे वह पराम्बा शक्ति माँ है, जगदंबा चामुंडा है, दुर्गा है। जो नाम देना हो दीजिए। ऐसी माँ के आश्रय में हम बैठे हैं तब अलग-अलग प्रश्न है। 'बापू, जगदंबा की अष्टभुजाओं का अर्थ क्या है?' माताजी की अष्टभुजा; हम मानते हैं कि अष्टभुजा है। बाकी उसके अनेक हाथ हैं। अष्टभुजा यानी हजार भुजा की जरूरत नहीं है। दो हाथ काफी है। दो-दो हाथवाली देवियां है। ये सभी माँ है। सभी जोगमाया है। एक हजार हाथ से रोटियां नहीं पकाई जाती। रोटी तो दो हाथों से पकाई जाती है। दो हाथों से ही सींचना बनता है। परोसने में भी पात्र और चम्मच के लिए दो ही हाथ काफ़ी है। हजार हाथ तो माँ का ऐश्वर्य है, वैभव है।

अष्टभुजा; थोडा व्याकरण आयेगा। पर आप को परेशान नहीं करूं! शैल माने पर्वत। यह माँ का जो टीका है यह शैल और भवानी का नाम शैलजा है। पर्वत में से जिसका प्रागट्य हो वह पार्वती है; शैलजा। जानकी का एक ओर नाम भूमिजा है। भूमि से जन्मी वह भूमिजा। पृथ्वी में से प्रगट आठ वस्तु भूजा है। चामुंडा के आठ हाथ है। पृथ्वी में से आठ वस्तु का प्रागट्य हुआ। यूं तो 'बहुरत्ना वसुंधरा' कहलाती है। शरीर के इस हिस्से को स्कंध कहते हैं। इसका नाम भुजा है। पराअंबा, जगदंबा मा को आठ हाथ होते हैं। पृथ्वी में से प्रगट आठ वस्तु माँ की भुजा है। मैं हृदय से बातें कर रहा हूं। मेरी जो बात आपको छू जाय उस दिन समझना कि चामुंडा ने अपने हाथ से मेरा स्पर्श किया है। इसमें जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। श्रद्धा चाहिए।

पृथ्वी में से निकलती एक वस्तु को शास्त्र गंध-सुगंध कहते हैं। जब-जब हमें अंतर मन से लीन करनेवाली कोई सुगंध सहसा प्रगट हो उस दिन समझना कि चामुंडा ने मुझ पर कृपा बरसाई है। उस दिन मेरी माँ ने नाक पर पसीना पोंछने के लिए हाथ फेरा है। मुझे इसकी खुश्बू आ रही है। यह गंध जगदंबा की एक भुजा है। साहब, हर जगह कलिप्रभाव पड़ा है। ये सब दबा हुआ है। भुजाओं का प्रागट्य हो रहा है। हमें स्पर्श हो रहा है। या तो अपनी नासिका कमजोर पड़ गई है। जड़ता की सर्दी लग गई है। अत: खुश्बू पकड़ी नहीं जाती।

दूसरी भुजा; पृथ्वी में से जल निकलता है। आज के संदर्भ में जल के बारे में सोचना है। पृथ्वी से फूटता झरना, पर्वत से निकलता झरना। ये सभी जगदंबा की भुजाएं है। यह माँ का खेलता हुआ हाथ है। माँ को सहसा याद करते-करते आंख में आंसू आए तो समझना कि माँ की भुजा मेरी आंख पर हाथ फेर रही है। जलतत्त्व भुजा है। यह दूसरी भुजा है। तीसरी भुजा; पृथ्वी में से धातु निकलती है। सोना, चांदी, ताम्र, कांसा ये सभी धातु निकलती है। शास्त्र का मंथन करते-करते गुरुकृपा से कुछ मिल जाय; सहसा रत्न मिल जाय तो समझना कि धातु के रूप में माँ की भुजा का वरदान दिया है। चौथी भुजा; पृथ्वी में से तेल निकलता है, जिसे संस्कृत में स्नेह कहा गया है। इस धरती में से फूटता स्नेह, हमें पूरी तरह से स्नेह भर दे तो समझना कि माँ चामुंडा अपने शरीर पर हाथ फेर रही है। स्नेह चौथी भुजा है।

जगदंबा की पांचवीं भुजा क्षमा है। एक आदमी भूल करे और दूसरा आदमी उसे माफ़ कर दे पर तात्त्विक दृष्टि से उस भाई में रही हुई माँ ने माफ किया है। यह

भूलना नहीं चाहिए। क्षमा उनकी भुजा है। जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं, 'क्षमामंडले।' क्षमा का अर्थ पृथ्वी है। हम से गुनाह हो जाय और क्षमा मांगने पर सामनेवाला हृदय से क्षमा दे तब उसमें बैठा हुआ चामुंडा तत्त्व हमें क्षमा देता है। क्षमा उनकी भुजा है। धरती का एक ओर लक्षण धृति है। हम सब को धारण करती है। पराअंबा पृथ्वी धारण करता तत्त्व है। चाहे गर्भ में, गोद में, पलने में, शैया में, कमरे में, आंगन में धारण करे। यह धारण करता तत्त्व चामुंडा की छठ्ठी भुजा है। सातवीं भुजा औदार्य है। एक गेहूं का दाना बोने पर गेहूं की बेहद फसल मिले। आठवीं भुजा सहनशीलता है। धुआं और धूप में बहुत फ़र्क है। कहां धुआं और कहां धूप? कहां शोला और कहां ज्योत? यह देश शोला और धुंआ का नहीं है। यह धूप और अखंड ज्योत का देश है। ये हंमेशा माँ की भुजा का काम करते हैं।

एक भाई ने पूछा है, जब आपने कथा कहनी शुरू की तब दादाजी जीवित थे? नहीं थे। सब देकर चले गए। संकेत देकर गए कि ववेक से रहना। जब ठाकुर रामकृष्ण परमहंस को गले में बहुत तकलीफ़ थी तब देश के एक अद्भुत युवक विवेकानंद की आंख में आंसू आ गए। तब रामकृष्णजी ने कहा, विवेक, मेरी जिंदगीभर की संपदा तुम्हें सौंप कर जा रहा हूं। जनमजनम की साधना देकर जा रहा हूं। मेरे दादा ने कथा नहीं सुनी पर उनके जाने के बाद उनके आशीर्वाद से बोलता हूं। कहीं तो सुनते होगे ना! यहां फिर किसी में बैठकर सुनते होंगे। यहां चेतनाएं कहां जाती है? ये तो घूमती चेतनाएं हैं। माँ का एक दूसरा रूप-

या देवी सर्वभूतेषु क्षमारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम:।।

जगदंबा के रूपों का वर्णन अपने यहां स्तोत्र में आए हैं। एक रूप क्षमारूपेण है। मा क्षमामूर्ति है। क्षमा त्रिगुणी है। क्षमा का अंतिम तात्त्विक रूप गुणातीत क्षमा है। क्षमा त्रिगुणधारिणी है। रजोगुणी क्षमा; किसी लड़के ने अपने घर में ही चोरी की। पिता को अच्छा नहीं लगा। किसी को भी ठीक नहीं लगा। पर माँ ने कहा, 'आपने पैसे दिये होते तो चोरी नहीं करता। बच्चा है। उसे कुछ न कहना। माफ़ कर दीजिए। उसकी जेब में पांच सौ रूपये डाल दीजिए।' यह रजोगुणी क्षमा है।

एक क्षमा तमोगुणी है। दो थप्पड़ मारकर कहना, 'जा माफ़ किया!' दो-तीन लात मारकर आंगन में फेंक दे। अब दूसरी बार मत करना। यह तमोगुणी क्षमा है। एक क्षमा सत्त्वगुणी है। गुनाह क्यों किया इसका विश्लेषण किया। तुरंत निर्णय न लो। पृथ्थकरण करे। दंड या क्षमा का निर्णय शीघ्र न करे। मुझे भी बिनती करनी है। माँ की गोद में, घर में बैठे है। किसी भी व्यक्ति को लेकर निर्णय लेने से पहले चार बार सयाने लोगों से पूछना। कूदना नहीं! जो दंड और क्षमा का मंथन करे, सत्त्वगुणी क्षमा है। यह चिंतनशील है। किन परिस्थितियों में भूल की होगी? थोड़ा चिंतन करे। दंड की मात्रा, क्षमा की मात्रा सोचे। गुनाह को तराजू में तौलकर, बहुत सोच-विचारकर हंसते-हंसते क्षमा कर दे यह सत्त्वगुणी क्षमा है।

हम जिस माँ की चर्चा करते हैं वह चंडी है। जगदंबा युद्धचंडी नहीं रणचंडी है। रण और युद्ध में काफ़ी फ़र्क है। राम युद्धप्रेमी नहीं, रणप्रेमी है। 'रणरंगधीरं।' युद्ध वह है जिसमें हिंसा ही होती है। रणांगण के रंग में संहार नहीं, उद्धार होता है। कल्याण है। निर्वाण होता है। पूरा संदर्भ अनोखा है। तुलसीजी ने 'लोकाभिरामं रणरंगधीरं' कहकर पूरा संदर्भ बदल डाला है। यह गुणातीत क्षमा है। माँ की क्षमा में न रजोगुण है, न तमोगुण है न तो सत्त्वगुण है। वे गुणातीत है। चौथी क्षमा वीरताभरी क्षमा है। अपने यहां 'क्षमा वीरस्य भूषणं।' कायर की क्षमा मूल्यहीन होती है। परंतु मानव सबल है

फिर भी क्षमा देता है कि जा, कोई हर्ज नहीं। कोई चिंता नहीं। सच्चा हो, प्रामाणिक हो, वीर हो पर कायर नहीं। उसीको जैनधर्म में महावीर कहा है। गाती जगदंबा नृत्य करते-करते पूरा गगन गढ़ सजाती है। महावीर क्षमा का रूप है। पराअंबा जैसी शक्ति और वीरता। पराअंबा जैसा शौर्य किसका हो सकता है? सभी देवता जिसके पास सुर-असुर सभी परास्त होनेवाले हैं। ऐसी पराअंबा शक्ति जो है पर उसकी क्षमा वीरतापूर्ण है। 'रामायण' का शब्द है 'छमासील जे परउपकारी।' क्षमाशील। कईयों की क्षमा शीलवान क्षमा होती है। देश बलवान बने। एक साधु के रूप में इच्छा रखता हूं, देश बलवान हो। आसपासवाले कुछ सुनते नहीं है! चाइनीज़ ने ब्रह्मपुत्रा पर बड़ा डेम बनाना शुरू कर दिया

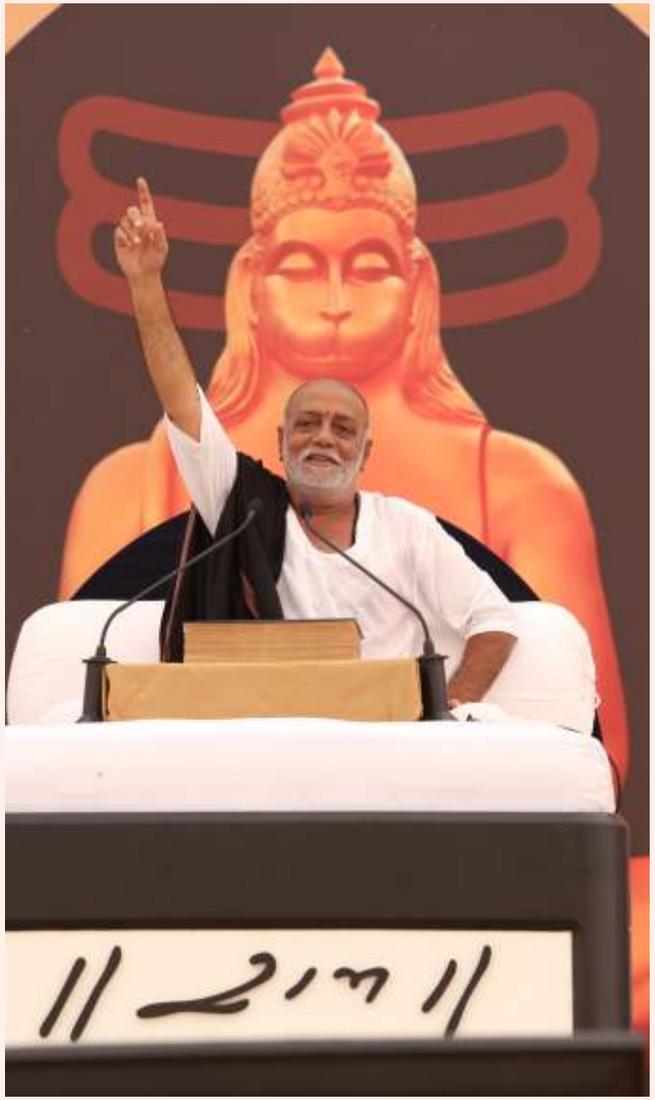

है! आज के अखबार की रिपोर्ट है। राष्ट्र बलवान के साथ शीलवान होना चाहिए। हम किसी को उपालंभ देकर फ़िर पछताए कि मैंने इसे क्यों कहा? ऐसे शीलवंत को नमन करने की बात गंगासती ने कही है-

शीलवंत साधुने वारेवारे नमीए पानबाई!
जेनां बदले नहि व्रतमान रे;

तो, वीरता से भरी क्षमा। रजोगुणी-तमोगुणी क्षमा। तमोगुणी क्षमा और शीलपूर्वक की क्षमा। मजबूरी से दी गई क्षमा भी होती है। हमें पता चल जाये कि क्षमा नहीं करेंगे तो मुश्किल हो जायेगी। यह मजबूरी की क्षमा है। पर मैं माँ चामुंडा की गुणातीत क्षमा का रूप रखना चाहता हूं। भगवती असुर संहार करते वक्त उग्रता धारण करती होगी उसमें कोई नया अर्थघटन करे तो ठीक है। संशोधन करना चाहिए। लेकिन युद्ध में रक्त पीने का पहले से ही अर्थघटन रहता होगा। क्या अर्थ करेंगे?

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ।

'रक्त' के सामने 'विरक्त' शब्द है। मुझे लगता है, कोई परमशक्ति, परमदेवी, पराअंबा, परमतत्त्व हमारा रक्त पीता है। माने हमारा रक्त पी जाय। हम में रहा वैराग्य स्थापित करता है। विरक्ति का स्थापन होता

है। रक्त का अर्थ है आरक्त नैन। आरक्त नैन का अर्थ होता है ओतप्रोत। हमें पता नहीं चलता इस तरह हममें रक्त ओतप्रोत बहता है। नली सकुचाने से श्वास लेने में तकलीफ़ हो जाने से पता चलता है कि रुधिराभिसरण में कुछ तकलीफ़ है। बाकी रक्त तो प्रवाहित होता रहता है। ओतप्रोत है वो अलग नहीं हो सकता। हमारा स्वार्थ, राग, आसक्ति इतनी जुड़ी हुई है। जगदंबा कृपा करती है तब हमारी आसक्ति, रक्तता ले लेती है। हममें सोई विरक्ति जाग्रत करती है।

कथा से आप परिचित है। श्री हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं।

नाम लंकिनी एक निसिचरी ।

लंकिनी एक ही है। रावण भी एक ही है। मंथरा भी एक ही है। शूर्पणखा भी एक ही है। आप को विश्वसाहित्य में लंकिनी मिलेगी नहीं। मंथरा भी नहीं। विभीषण भी एक ही होता है। समस्त अशोकवाटिका में त्रिजटा भी एक ही है। लंका में इतनी सारी स्त्रियां होगी पर मंदोदरी एक ही होती है। तुलसीदासजी के 'एक' शब्द प्रयोग में गहनता है। हनुमानजी लंका में प्रवेश करने गए तब कहा, 'मुझे युं छोडकर कहां जाते हो?' लंकानगरी ही रात में लंकिनी रूप धारण कर चौकी करती है। हनुमानजी से पूछा, कहां जाते हो? हनुमानजी के लंकाप्रवेश में विघ्न आया। तुलसीदासजी लिखते हैं-

मुठिका एक महा कपि हनी ।

यहां भी 'एक'; एक मूठ्ठी काफ़ी है। ज्यादा मारने की जरूरत नहीं है।

रुधिर बमत घरनीं ढनमनी ।।

एक मूठ्ठी का प्रहार सिर पर किया है। 'मानस' में लिखा है, खून निकल गया है। धरती पर गिर पड़ी। हनुमानजी तो साधु। अरे, साधु ही क्या?

साधु संत के तुम्ह रखवारे...

समग्र साधुसंत जिनकी सुरक्षा में आनंद करता है उनकी साधुता के बारे में क्या कहना? क्या साधु मुष्टि प्रहार करता है? लहू के लिए सभ्य शब्द 'रक्त' है। रक्त निकला इसका अर्थ पंडित रामकिंकरजी महाराज ने ऐसा अर्थ किया। यह मैंने उनसे सुना हुआ अर्थ है। साधु मुष्टि प्रहार करे इसका अर्थ रक्त निकाल विरक्ति प्रागट्य करना है। सचमुच विरक्त बनी गई। आसक्ति छूटने पर साधुता समझ में आती है। रक्त निकल जाने पर कहने लगी-

तात मोर अति पुन्य बहूता ।
देखेउँ नयन राम कर दूता ।।

रक्त निकल गया। दृष्टि बदल गई। जिस हनुमानजी में लंकिनी को चोर दिखता था। वह रक्त निकल गया, आसक्ति निकल गई, स्वार्थबुद्धि का नाश हुआ, फ़िर जिस हनुमानजी को लंकिनी चोर कहती थी; अब कहती हैं, 'मैंने रामदूत के दर्शन किए।' दृष्टि परिवर्तन हो गया। रक्त खींचने का यह अर्थघटन होना चाहिए। माँ लहू नहीं पीती। हम में रक्त सींचे। लहूलुहान होकर पोषण करे। मैं पुनः कहता हूं, इस टीले पर बैठी है वह तो है ही। वह तो रहेगी ही। पर घर में भी चामुंडा बिराजमान है यदि नज़र खुल जाय तो। वह अपने लिए रक्त बहाए, पसीना बहाए-

सुकामां सुवाडी भीने पोढ़ी पोते,
पीड़ा पामुं पंडे तजे स्वाद तो ते;
मने सुख माटे कटु कोण खातुं
महा हेतवाळी दयाळी ज मा तूं.

-दलपतराम

शंकराचार्य भगवान ने माँ पर पूरा स्तोत्र लिखना पड़ा। 'देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्।' 'हे पराअंबा, हे माँ, मुझ पर तेरी कृपा न हो तो हाहाकार मच जाए।' कविता तो देखिए! वे केवल जगद्गुरु ही नहीं, महान सर्जक भी है। शंकराचार्य के स्तोत्र कविता के नये मापदंड़ों का निर्माण

करते हैं। शिखरिणी छन्द देखिए साहब! अनुष्टुप देखिए! जगद्गुरु ने अद्भुत काम किया है!

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहव: सन्ति सरला:
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुत:।
मदीयोऽयं त्याग: समुचितमिदं नो तव शिवे।
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।

पुत्र कुपुत्र हो जाय पर माता कुमाता नहीं होती। माँ का जो असली सात्त्विक रूप है वह लहू पीनेवाली नहीं है। वह हमारे भीतर आसक्तिरूपी लहू को पीकर वैराग्य की दाता बनती है। माँ का कार्य वैराग्य देना है। इसका अर्थ यह नहीं कि बच्चों का ब्याह नहीं करना है। दुनिया में चाहे गरीब माँ-बाप हो, बेटे का ब्याह हो तब बेहद आनंद का अनुभव करते हैं। फ़िर चाहे राम या कृष्ण की माँ हो। फ़िर भी उसका मूल हेतु तो वैराग्य का दूध पीलाने का है।

साधु कभी वर्तमान घड़ी को भूतकाल नहीं होने देगा, भविष्यकाल भी नहीं। सतत क्षण को जाने वही साधु है। साधु ऐसा नहीं बोलता कि मेरी घड़ी चली गई। उसे पता है कि घड़ी पकड़ में आ गई है। घड़ी जब आए तब जी लेंगे ऐसे भविष्य में साधु नहीं जीता। साधु हमेशा वर्तमान में जीवित रहता है। शायद गंगासती उसी अर्थ में बोले हो कि साधु उसे कहे जो वर्तमान में जीए।

निज़ामुद्दीन ओलिया अपने दो मुस्लिम शिष्यों के साथ बैठे हैं। उमर और अमर नाम है। उन्होंने ओलिया की मुहब्बत हांसिल की थी। और एक तीसरा हिन्दु शिष्य था। ओलिया को वर्ण-वर्गभेद नहीं होता। शिष्य न तो हिन्दु होता है, न मुसलमान होता है। जिस दिन धर्म नुकसान पहुंचाये तब वह धर्म नहीं रहता। गहन अंधेरा हो तो हम दीया जलाते हैं पर दीया ही जला देने का काम करे तो सब टूट जाता है! यह जोड़ने का काम कबीर ने किया था, नानक ने किया था, दादा मेकरण ने किया था। संत देवीदास, जलारामबापा ने किया था। मेरी ये सारी जगहें, आदरणीय संस्थाएं, उनके मूल पुरुष और वर्तमान कालीन सब यही कर रहे हैं। यह करना ही होगा। यह साधनाशील पुरुषों का स्वभाव है। मुझे तो समझ में आ गया है, कुछ भी है ये गुरु का कर्म है। हमारे भजन उनकी प्रसादी है। नहीं तो हम माला का एक मनका तक फ़ेर न सके! ऊंगलियां अपनी होती है, ईशारे उनके होते हैं। संकेत किसीके होते हैं। कोई पीछे बैठे हैं दुर्गा, कृष्ण, राम, बुद्ध, महावीर, कबीर, तुलसी, मीरां, गंगासती, नरसिंह महेता बनकर। भक्ति तो आदमी को आमूल परिवर्तन कर दे। नरसिंह ने कहा-

भूतळ भक्ति पदारथ मोटुं, ब्रह्मलोकमां नाहीं रे।
पुण्य करी अमरापुरी पाम्या, अंते चोरासी मांही रे।।

बंदगी और भजन की भूमिका बहुत ही अलग है। साधु भूतकाल होने नहीं देता, न भविष्य होने देता। माँ के क्षमारूप की चर्चा हुई। हनुमानजी की वंदना के बाद सीता-रामजी की वंदना; रामनाम की महिमा तुलसीदासजी ने गाई है।

नौ दिनों की कथा शांति से सुने यह भी अनुष्ठान है। फ़िर चाहे भागवत-कथा हो या देवीभागवत हो, शिवपुराण हो, रामकथा हो, कोई भी सत्संग हो। जिसमें से शूरवीरता और बलिदान की सीख मिले ऐसी लोकवार्ता हो यह भी अनुष्ठान है। यहां आप को कविता को भी स्वीकार करना होगा। झिंझिया, श्लोक, ऋचाओं को भी स्वीकार करना होगा। कोई ब्याह के गीत, दोहों का भी स्वीकार करना होगा। अब कोई परहेजी नहीं चलेगी। ये सभी शक्तिपाठ है। रामकथा सुनिए, भगवान की कथा सुनिए, कोई भी अच्छी कहानी सुनिए।

चामुंडा खप्पर नहीं रखती, अक्षयपात्र रखती है

युद्ध का मैदान है। लंका की पूर्व भूमिका मैंने रखी है। रावण 'करूं या मरूं' ऐसी संकल्पशक्ति लेकर मैदान में उतरा है। तुलसीदासजी ने उस समय साहित्य के चार रसों का वर्णन किया है। ऐसा युद्ध में ही होता है। यद्यपि मैं युद्ध समाप्ति का मिशन लेकर घूमता हूं। लेकिन रणमैदान के वर्णन पढ़ते हैं, कहते हैं तब एक ही घटना में रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स रस सामने आ जाते हैं। बहन, बेटी, माता, विधवा के कल्पांत के पश्चात् करुण रस आता है। विचारशील लोग बेवजह लड़ते हो तब हास्य रस प्रगट होता है!

इक्कीसवीं सदी की चामुंडा गाती हुई है। पूर्वग्रह हो तो भी एक बार तुलसी की दृष्टि देखिए, पढ़िए। तलगाजरडा आमंत्रण देता है। क्या चौपाई है?

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ।

युद्ध के मैदान में आकाश के अंदर योगिनियां खप्पर में सब भरती हैं। क्या भरती है यह लिखा नहीं है। कवि लिख पाता कि क्या भरा है? घी भरा है, पानी भरा है? ये योगिनियां क्या भर रही है? 'खप्पर संचहिं।' संचहिं मानी संचय करती है। क्या? भाष्यकारों ने लिखा, रक्त भर रही है। 'खून' या 'लहू' शब्द नहीं लिखा है। तलगाजरडा अपनी जिम्मेवारी से कहता है, अपनी माँ, जगदंबा लहू नहीं भरती, अमृत भरती है। चामुंडा के हाथ में खप्पर नहीं, अक्षय पात्र है। युद्ध के वर्णन बहुत हुए। इक्कीसवीं सदी में सौम्य भगवती की कविताएं आने दीजिए। भगवती की कविता से आशीर्वाद आए। यह बहुत जरूरी है। माँ ने युद्ध में संहार किया। इन वर्णनों को अनदेखा नहीं कर सकते। यह निर्वाण और निर्माण की प्रक्रिया थी। खप्पर में लहू भरना बीभत्स रस है। माताजी ने लहू पीना बंद कर दिया। हमनें शुरू किया! क्यों तुलसी नहीं लिखते कि लहू भरा है। 'गीताप्रेस' में भी यही अर्थ है। सभी भाषान्तरों में यही है। शायद यह पूर्व वर्णनों के आधार पर है। तुलसी नहीं लिखते तब मुझे लगता है, अब चामुंडा खप्पर नहीं रखती, अक्षयपात्र रखती है। उसमें अमृत भरती है।

जनकराजा की मिथिला में, उसके बाग में जो गौरी का मंदिर है ऐसा मंदिर जगत में और कहीं नहीं है। जनक बहुत समृद्ध है। वे कैसा बनाते? पर तुलसी ने यहां 'मंदिर' शब्द प्रयुक्त किया ही नहीं है। माँ को घर होता है। 'मंदिर' शब्द से हम आरती करे यह हमारी श्रद्धा है। माँ को भवन होता है-

गई भवानी भवन बहोरी ।
बंदि चरन बोली कर जोरी ।।

जनक की समस्त नगरी में 'भवन' शब्द आया है। लंकानगरी में 'मंदिर' शब्द है। देहनगर में मंदिर, विदेहनगर में भवन। यह रचनाकार सर्जक है, क्रियेटर है, विधाता है। वह कैसा शब्दप्रयोग करता है? जनक के यहां जो भवन है उसमें झरोखें भी है। बिना झरोखा के भवन जेल जैसे हैं। खिड़कियां में से नए-नए विचार आते हैं। खिड़की से ही बाज़ार में निकला राम दिखाई देगा। अन्यथा राम दिखाई नहीं देगा। इक्कीसवीं सदी में सभी स्वरूपों की पुन: विचारणा होनी चाहिए। मूल तत्त्व पकड़कर ही होनी चाहिए। जगदंबा, जगदंबा ही रहे। माँ माँ ही रहे। चोटीलावाली

वही रहे। फ़र्क न हो। पर खप्पर की जगह अक्षयपात्र देना होगा। लहू की जगह अमृत भरना होगा। यह चामुंडा का मंदिर तो है ही। मंदिर से इन्कार नहीं। यह देश मंदिरों का है। श्रद्धा का स्थान है।

माँ के मंदिरों में माता के पास प्राय: तांत्रिक साधनाएं हुई है। आदिपुरुष भी इसमें शामिल है! आज भी एक भाई ने मुझे चिट्ठी लिखी है, 'बापू, भगवान यों कहते हैं कि 'मोहि कपट छल छिद्र न भावा।' तो मैली विद्या और इस तंत्र की साधनाएं, उसके पाठ या अनुष्ठान से ईश्वर को भी ड़र लगता है? ईश्वर को ड़र लगे या नहीं पर एक वस्तु समझा हूं, मैली विद्या दूसरों को दु:खी कर स्वयं को भी दु:खी करती है। मैली विद्या किसीको सुखी नहीं कर सकती। तुलसीदासजी ने माँ जगदंबा का चित्र खींचा है। 'मानस' में कोई विधि नहीं बताई है। विधि का इन्कार नहीं करता। ऐसे प्रश्न गांव के भाई-बहन पूछ रहे हैं। 'हमें पूजा करनी नहीं आती। हमारे पास तो दो हाथ, एक सिर है।' इसके सिवा कुछ करने की जरूरत भी नहीं है। क्या जानकीजी शिक्षित थी? सीताजी नागरी कन्या कही जाय? क्या उसे पूजा नहीं आती होगी? विधि नहीं आती होगी? 'मंदिर' शब्द नहीं जानती होगी? उसने क्या किया? गांव के भाई-बहनों की श्रद्धा को प्रणाम कर कहता हूं, जितना जानकीजी ने किया उतना करेंगे तो भी चामुंडा प्रसन्न होगी। जानकी ने क्या किया?

गई भवानी भवन बहोरी ।

माँ के मंदिर में गई। गौरीभवन, गिरिजाघर, पार्वती का घर। तुलसीदासजी 'मंदिर' शब्दप्रयोग नहीं करते।

सर समीप गिरिजा गृह सोहा ।

गिरिजागृह। कुछेक तथाकथित धर्मवालों ने तुलसीदास के गिरिजाघर का गलत उपयोग कर और एक अलग गिरिजाघर को स्थापित करने हेतु नेटवर्क आयोजित किए हैं! अज्ञानी के क्या अरमान? राजमार्ग पर चले या सरकारी मार्गों पर या अपनी जमीं पर पगदण्डी बनाइए। किसी के खेत में नहीं! लोगों ने गिरिजाघर का गलत अर्थ किया! 'रामायण' में लिखा है सीताजी ने क्या किया?

बंदि चरन बोली कर जोरी ।।

माँ के चरण में वंदन किए। हाथ जौड़े हैं। इसमें सृष्टिभर की पूजा आ गई। और इस प्रसंग का पूर्व पक्ष लो। -

मज्जनु करि सर सखिन्ह समेता ।
गई मुदित मन गौरि निकेता ।।

'मंदिर' शब्द ही नहीं आता। 'गौरी निकेता।' निकेत मानी घर-भवन। दो-तीन सूत्र समझ लें। यह सीख नहीं है। आप के साथ बातचीत है। माँ के घर जाए तब मन प्रसन्न रखे। मुदित मन से जाना। तुलसीदासजी माँ गौरी की उपासना का प्रथम सूत्र देते हैं, प्रसन्न मन से जाना। फ़िर चरणवंदना करनी।

पूजा कीन्ही अधिक अनुरागा।
निज अनुरूप सुभग बरु मागा।।

जानकी ने पराअंबा की पूजा की। परंतु षोड़शोपचार, पंचोपचार, दशोपचार की; अबील, गुलाल, कुमकुम, सिंदूर, लाल-काला धागा, नारियेल, पांच सुपारी, नैवेद्य-भोग से की ऐसा कुछ नहीं लिखा है। जानकी ने कौन-सी सामग्री से पार्वती-पराअंबा की पूजा की? हमें कई बार लगे पूजा की सामग्री नहीं है तो हम कैसे पूजा करे? छतर चढ़ाए यह वंदनीय है। हमारे पास सुवर्ण-नारियेल कुछ भी न हो तो क्या करे? तब तुलसी पूजा की सामग्री देते हैं। जानकी ने कौन-सी सामग्री ली? जानकी के साथ दो आचार्य-राजपुरोहित कोई नहीं है; सुवर्ण थाल में सामग्री लेकर जानेवाले सेवक भी नहीं है। एक भी पुरुष साथ नहीं है। केवल अष्ट सखियां हैं। गौरी की पूजा है। अत्यंत अनुराग यही पूजा की सामग्री है। प्रसन्नता से मंदिर में सिर झुका, चरणवंदना करनी है। पूजासामग्री न हो तो चिंता मत करना। हृदय में अधिक अनुराग काफ़ी है।

हम इच्छाधारी संसारी है। मुझे एक श्रोता ने लिखा है, 'बापू, आप शक्ति के सभी स्वरूपों को लेकर बता रहे थे पर एक शक्ति रह गई वह है इच्छाशक्ति, विल पावर। इच्छाशक्ति रखनी। आशाशक्ति न रखनी। इच्छा और आशा में काफ़ी फ़र्क है। आशा बांधती है, विलपावर दरवाजा खोलती है। तुलसीदासजी 'दोहावली' में लिखते

हैं, 'आशा नामक एक देवी है कि जिसकी आप पूजा करे तो चीढ़ जाय। यदि ठुकरा दे तो धन्यधन्य हो जाय! आशा नामक विचित्र देवी है। भजनिक को कोई आशा न रखनी, विलपावर रखना है। इच्छा रखनी चाहिए। मुझे क्यों हरि न मिले? लोकमान्य तिलक कहे, स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। गांधीजी कहे, 'कौएं-कुत्तें की मौत मरूंगा पर आज़ादी नहीं मिलेगी तब तक साबरमती आश्रम में लौटकर नहीं आऊंगा।' और उन्होंने सिद्ध किया। उसी तरह माँ को पाने का हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। क्यों न हो? विलपावर होना चाहिए। ये छोटे-छोटे सूत्र है। 'रामायण' में लिखा है। शास्त्र से बाहर नहीं जाना। जाऊंगा तो मेरी जिम्मेवारी से कहूंगा। मेरी मांग है, साधु और सर्जक स्वतंत्र होना चाहिए। इस राष्ट्र में जिसके पास साहित्य है, सच्चा धर्म है, सच्चा समाज है उसे भगवान करे कोई भी सत्ता वशीभूत न करे। उन्हें कोई खरीद नहीं सकता। वे स्वाधीन-स्वतंत्र होते हैं।

तो, प्रसन्न मन से जाना। यह मेरी माँ का घर है। ऐसे मन से जाना। चरणों में सिर नंवाकर हाथ जोड़ना। प्रेम ही पूजा की सामग्री है। हम संसारी है। हम माँ से मांगते भी है। यह अधिकार है। माँ चामुंडा से मांगने का हमारा अधिकार है। जानकी ने क्या मांगा?

निज अनुरूप सुभग बरु मागा।।

'हे माँ, मेरी कक्षा अनुसार अच्छा देना। सुभग मानी सुंदर। माताजी से हम अपनी पात्रतानुसार मांगे। माँ चामुंडा से दो हाथी मांगे तो माँ दे देगी। पर कहां बांधगे? हम टट्टू-बकरी नहीं बांध सकते तो हाथी कहां बांधेगे? माँ नहीं देती क्योंकि वह समझती है, यह कहां बांधेगा? हमें समझकर मांगना चाहिए।

'रामचरित मानस' में गौरीपूजा की केवल यही विधि है। और ये कोई भी व्यक्ति स्वीकार कर सकता है। इसमें कहीं मैली विद्या-तंत्रोपासना नहीं आती। आवेश को कोई स्थान नहीं है। डुगडुगी आती है। भगवान शंकर ने यही शस्त्र रखा। यही वाद्य रखा। वाद्य रखेंगे तो शस्त्र शोभा देगा। नहीं तो शस्त्र संहारक बनेगा। तुलसी लिखते हैं-

कर त्रिसूल अरु डमरु बिराजा।

शिव के हाथ में त्रिशूल है। 'त्रय: शूल निर्मूलनं शूलपाणिं।' पर नाद रखा है। नाद शस्त्र से भी ज्यादा काम करता है। भजन के नाद ने कितने उजालें फ़ैलाए हैं! नाद की बहुत बड़ी ताकत है। जगदंबा के पास जाकर हमें कितना चाहिए उसके अनुसार मांगना चाहिए। आप माताजी को ऐसा कहे कि मैंने सुवर्ण मुकुट की प्रसादी की, ठीक किया। पर कभी दो-तीन कन्याओं का ब्याह करवा दीजिए। उस दिन माँ को सच्चा मुकुट मिल जायेगा। यही तो करवाना है। वहीं से प्रेरणा लेकर कोई दो बेटियां मध्य प्रदेश से काम करने आई हो, कोई गोधरा से आई हो, बेटी उम्रलायक हो गई हो, तब उनके लिए भी थोड़ा करना। ये गौरी की सच्ची पूजा है। यही सच्ची पूजा होगी। जितनी कन्या कुंवारी है, ये जगदंबा है, पराअंबा है। भवानी पूजावश नहीं है। जानकी के विनय-विवेकवश, प्रेमवश होकर तुलसी ने लिखा-

बिनय प्रेम बस भई भवानी।
खसी माल मूरति मुसुकानी।।

विनय और प्रेम के वश पराअंबा आनंदित हुई। उसके कंठ की माला खिसक गई। पूजारी उतारकर माताजी को माला देते हैं। शिवजी का नमन दे यह अद्भुत है। पर यहां तो माताजी ने अपने गले की माला प्रसन्नता से जानकी को दे दी। देवी के हाथ की माला मालामाल कर देती है। ज्योंही देवी ने माला दी जानकी ने सिर पर चढ़ाई। माँ मुस्कुराई, बोली। प्रसादी की माला दी। जानकी स्तुति करे और पराअंबा बोले इसमें क्या आश्चर्य? उन्होंने कहा, 'सीया, तेरे मन में जिस वर की ईच्छा है वही तुम्हें मिलेगा।' फ़िर तुलसी ने छंद लिखा वहां 'देवमंदिर' शब्द आया। अब तक गिरिजागृह, गौरीनिकेत, भवानीभवन। अब कहते हैं, 'मंदिर चली।' इस तरह जगदंबा को जो पूजेंगे उसका घर मंदिर बन जायेगा। उसका घर ही मंदिर हो जायगा। इतना करना। विधि कीजिए। पर न हो सके तो प्रसन्नता से माँ के घर जाय। हाथ जोड़कर चरणप्रणाम करना। प्रेम की पूजासामग्री रखनी। अपनी पात्रतानुसार इच्छा रखनी।

'रामचरित मानस' के 'लंकाकांड' से ली गई ये दो पंक्तियां जिसमें चौपाई का एक भाग। वहां रक्त भरा है ऐसा नहीं लिखा है। माँ ने अक्षयपात्र में अमृत भरा होगा।

भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं।

'नंचहिं' मानी नृत्य करती है। कौन करती है? भूत और पिशाच की पत्नियां, वधूएं। तुलसी के मन में भूत-प्रेत की व्याख्या क्या होगी? 'रामायण' में ऐसा वर्णन किया है-

तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा।
संग भूत प्रेत पिसाच जोगिनि बिकट मुख रजनीचरा।।

भूत कौन? बीता हुआ काल। पिशाच कौन? आनेवाला समय पिशाच है। उसकी छायाएं नाचती है। हमारे आसपास भूतकाल की छायाएं नाचती है। हमारे लिए भूतकाल के कर्म गले पड़े हैं। हम सुखी क्यों नहीं है? हम सुखी होने चाहिए। वेदांत कहते हैं, जीव का स्वरूप आनंद का है। 'सत् चित्त आनंद।' जो अपना स्वरूप यह है तो हम दु:खी क्यों है? भूत गले पड़े हैं? वह भूत डुगडुगीवाला ही निकाल सकता है। और अब हथियार को नष्ट कर दो और वाद्य को सजाओ। समर्थ साहित्यकार इस धरती के पुत्र मेघाणी कहते हैं-

घण रे बोले ने एरण सांभळे हो...जी
बंधुडो बोले ने बेनड सांभळे हो...जी
बहु दिन घडी रे तलवार,
घडी कांई तोपुं ने मनवार;
पांच-सात शूराना जयकार
काज खूब खेलाणा संहार;

मैं सीख नहीं देता, संवाद करता हूं। यह दुनिया ऐसी है। किसीकी वाह-वाह देख पैर छूए। दूसरा कुछ और कहे तो भाग जाय! यह संसार है। हमें सावधान रहना है। यहां गांव के लोग है। गालिब का शे'र सुनाऊं। माँ के स्वभाव का शे'र है। गालिब हो तो क्या? चामुंडा तो उनमें भी बैठी होगी। चाहे कोई भी हो; पराअंबा तो सभी घट में बिराजमान है।

बिस्तर बांध लिया है मैंने 'गालिब',
बताओ कहां रहते हैं वो लोग जो किसी के नहीं रहते।

जिसका कोई नहीं, जो कहीं के नहीं रहते ऐसे आदमी कहां थे? ऐसे आख़िरी आदमी का मुझे रास्ता बताइए। मैंने बिस्तर बांध लिया है। शायर कहता है। फ़कीर और साधुओं का यह स्वभाव है। जिसका कोई न हो, जो कहीं के न हो! यह माँ किसकी सहाय करे? जिसका कोई न हो उसे अष्टभुजावाली हाथ लम्बा करती है। वहां से घाटी में से हमें उठा लेती है। उठाने का तरीका अलग है। रस्किन की 'अन टु धिस लास्ट' की बात गांधीजी ने पकड़ी। आख़िरी आदमी जिसका कोई नहीं है, असहाय है। माँ उसकी सहाय के लिए दौड़ती है। जिसका कोई नहीं है उसे अंबा ढूंढ़ने निकलती है। हमें ऐसा लगता है सब हमारा सन्मान करते हैं तब कोई एक छोटी-सी व्यक्ति सत्य को उजागर करती है। हमें स्वीकारना चाहिए। अब रक्त पीनेवाली माँ न चाहिए। अमृत पीनेवाली चाहिए। अब खप्पर भरनेवाली नहीं, अक्षयपात्र भरनेवाली हो। जो उसका मूल स्वभाव है। अब इस जगदंबा-चामुंडा की जरूरत है।

मुझे माँ की तीसरी नौरात्रि को बुद्धिरूपेण संस्थिता की बात करनी थी। अब हथियार गलाकर तंबूरे के तार बनाने हैं। अंधश्रद्धा, वहम को बिदा करे। तुलसी ने वहम के पत्थर दूर किए हैं। 'वाल्मीकि रामायण' की इस के साथ तुलना कीजिए। कई प्रसंग भिन्न दिखाई देंगे। सर्जक को अधिकार है कि अपने ढंग से ले सके। मेरा तुलसी चामुंडा का एक नया रूप देता है। तो भूतकाल के भूत हमें गले पड़े हैं! मैं इतना घूमा हूं पर अभी तक एक भी भूत या पिशाच नहीं मिला! यहां तो कदम-कदम पर मिलते हैं! तुलसी इच्छा रखते हैं भूत की छायाएं और भविष्य की पिशाच की वधूएं सीमा में नहीं, मुक्त आकाश में नाचे, निर्भार हो। बंधन में से मुक्त हो। कौन नाच सके? जो बंधन से मुक्त हो। पैरों में जंजीर हो तो कैसे नाचा जाय? हम जीव है, शिव नहीं। भूल हो जाती है। मेरी एक बात है। किसी भी व्यक्ति को कमजोरियों के साथ स्वीकार करना चाहिए। हम उन्हें देव बना देते हैं।

फिर अपेक्षा पूरी नहीं होती तो निंदा होती है! मरहूम जयंत पाठक लिखते हैं-

रमतां रमतां लडी पडे भै माणस छे।
हसतां हसतां रडी पडे भै माणस छे।

आदमी का कमजोरियों के साथ स्वीकार करना चाहिए। थोड़ा कठिन है। ईश्वर एक भी कमजोरी के बिना पूर्ण हो और जीव कमजोरियों के साथ पूर्ण होना चाहिए। संतों ने स्वीकार किया। मेरी, आपकी हिंमत नहीं है। क्या भगवान मंदिर में ही मिलते हैं? मंदिर आश्वासन है। मंदिर शांति देता है। ये ध्यान के केन्द्र हैं। वहां जाय तो हमें ठंडक मिलती है। यह खाली सिद्धांत नहीं है। जिसे आद्य कवि नरसिंह महेता एवोर्ड मिल रहा है ऐसे हमारे ढसा के कवि मनोहर त्रिवेदी का शे'र है-

नथी काशीनी के नथी काबानी।
मारी आस्था छे गामताबानी।

मुझे तो मेरे गांव की महिमा है। काशी, काबा, मथुरा ये सभी पवित्र धाम है पर कहां जा पाऊंगा? मैं गाता रहता हूं-

हे मारुं तलगाजरडुं रूडुं, वैकुंठ नहीं रे आवुं।

गामताबा की ऐसी आस्था होनी चाहिए। मेरी तो बिनती है, भूतकाल की छाया को बंधन से मुक्त कीजिए। उसे नाच लेने दीजिए। बात पूरी हो। हम कितने सायों से बंधे हैं! हम सब के अनुभव है। किसी की कही हुई बात है। साहब, जब साये बहुत लंबे दीखे तब समझना कि दिन ढलने की तैयारी में है। हमें भूत और भविष्य को लेकर ऐसा-वैसा कर डालने की इच्छा हो जाय!

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

जिस ऊंचाई से समाज का आदमी छोटा लगे ऐसी ऊंचाई पर सयाने लोग नहीं जाते। क्योंकि ऐसा लगे कि मैं उपर चढा तो वो बहुत छोटा लगता है। वे बेचारे बोल नहीं पाते! कुछ सिद्धांत जो अनावश्यक है या विघ्नरूप है उसे यदि हम सवंदन हटा सके तो शास्त्र के मूल सर्जक बहुत ही प्रसन्न होंगे। अब ये सब आउट ओफ डेट है। प्रासंगिक नहीं है। माँ की नौरात्रि है। जागरण की रातें हैं। ये सोने की रातें नहीं है। मोह और अश्रद्धा के सपनें देखने की ये रातें नहीं है। प्रकाशपर्व की रातें है।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम:।।

आप ऋषिमुनियों की विशालता तो देखिए कि उन्होंने माँ को कितकितने रूपों में देखी! कभी क्षमारूप में देखी, कभी शक्तिरूप में देखी। दो दिनों से हम ये बातें कर रहे हैं। और आज बुद्धिरूपेण संस्थिता; 'रामचरित मानस' में तो लिखा है कि शक्ति के बिना बुद्धि की शुद्धि कोई कर ही न पाए। बुद्धि की शुद्धि शक्ति ही कर सकती है। 'रामचरित मानस' का अकाट्य लेख है कि बुद्धि की शुद्धि सिर्फ़ भगवती ही कर सकती है। तुलसी कहे, हे माँ-

ताके जुग पद कमल मनावऊ।
जासु कृपा निरमल मति पावऊ।।

'हे जगदंबा जानकी, आप के पैर पकड़ता हूं। आपकी कृपा से मुझे निर्मल बुद्धि प्राप्त हो।' वे हमारी बुद्धि निर्मल करे। शास्त्र में लिखा है जिसकी बुद्धि अनुभव पर्यंत मूलतत्त्व में स्थिर हुई होगी उसे जो देखेगा उसे पापमुक्त कर देता। 'मानस' में लिखा है, संतदर्शन से पाप मिट जाते हैं। हम किसी साधु के दर्शन करे तो पाप मिटे। इसका प्रमाण? पाप मिटे या नहीं? हम किसी सच्चे साधु को देखते हैं और आंखें गिली होती है। हमें ऐसा लगे बहुत आनंद मिला। मिल लिए। आनंद हुआ। प्रसन्नता हुई। पाप कम हुए हैं उनका यही प्रमाण है। माँ के दर्शन करने से क्यों प्रसन्न होते हैं? क्योंकि पाप मिट गए। शास्त्र जरा दूसरी बात करता है। संतदर्शन से पापमुक्ति मिले पर जिसकी बुद्धि अनुभव पर्यंत तत्त्व में स्थित हो।

तो कथातत्त्व में बुद्धि अनुभव पर्यंत होनी चाहिए। हमारी बुद्धि व्याख्या पर्यंत हो जाती है। अपनी बुद्धि अध्ययन पर्यंत, स्वाध्याय पर्यंत, अध्यापन पर्यंत होती है। दूसरों को सीखा सकते हैं। बुद्धि व्याख्या पर्यंत होती है पर अनुभव पर्यंत कितनी? 'रामायण' के आचार्य कहते हैं, जिसकी बुद्धि अनुभव पर्यंत है ऐसा कोई बुद्धपुरुष, साधु, फकीर हमें पाप से मुक्त करता है इससे बड़ी औषधि क्या हो सकती है? शास्त्र कहते हैं,

जिसकी बुद्धि अनुभव पर्यंत है वे जिसे देखेंगे, आकाश में उड़ते पंछियों को भी पापमुक्त करेंगे। जीव-जंतु को मुक्त करेंगे। जिसकी बुद्धि अनुभवपूर्वक तत्त्व में स्थित हुई वे पशुओं को भी मुक्त करेंगे। यहां तत्त्व में स्थित माने जगदंबा। नहीं तो शक्तितत्त्व और कौन है? तुलसीदासजी ने तत्त्व कौन इसी व्याख्या की है-

धरे नाम गुर हृदयँ बिचारी।
बेद तत्त्व नृप तव सुत चारी।।

वसिष्ठजी कहते हैं, हे दशरथजी, आप के चार पुत्र वेद के तत्त्व है। राम वेदतत्त्व है। राम माने-

दुर्गा कोटि अमित अरिमर्दन।

अमित दुर्गारूप राम है। माने शक्तितत्त्व है। जिसकी बुद्धि अनुभवपूर्वक स्थिर हुई होगी ऐसी कोई व्यक्ति हमें जिस दिन देखेगी उस दिन हमारे पाप धुल जायेंगे।

मुख दिखत पातक हरै, परसत कर्म बिलाहिं।
बचन सुनत मन मोहगत, पूरुब भाग मिलाहिं।।

गोस्वामीजी कहते हैं, जिसका मुख देखकर पाप मिट जाय ऐसा कोई बुद्धपुरुष हमें स्पर्श करे, कंधे पर हाथ रखे, पूछे, कैसे हो? तो जनमजनम के कर्म झुलसकर भस्म हो जाय। उनकी बानी सुने तो मन मोह से मुक्त हो जाय। ऐसा कोई परमतत्त्व किसी जनमजनम के भाग्य खुल जाय तब प्राप्त हो। हम भिक्षापात्र लेकर जगद्गुरु शंकराचार्य के पास जाए कि आपको यह शक्तितत्त्व, श्रद्धा, विद्या, शक्तिरूपेण कौन सा लगता है? भवानीतत्त्व क्या है? जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं-

आत्मां त्वं गिरिजा मति सहचरा प्राणा शरीरं गृहं।
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधि स्थिति।

जगद्गुरु हस्ताक्षर करते हैं। जगदंबा बुद्धिरूप है। शिव आत्मा है। गिरिजामति है। सात्त्विकी, राजसी, तामसी बुद्धि तीन प्रकार की है। 'भगवद्गीता' ने इसका पृथक्करण कर हमें समझाया है। तो जगदंबा चामुंडा यह बुद्धिरूपिणी है। हमारे सामने अनेकरूप में ऋषियों की अनुभवपर्यंत बुद्धि से दर्शन होते हैं।

रामकथा का आरंभ शरणागति से हुआ है। तुलसी कहते हैं, शरणागति के घाट पर 'रामायण' का आरंभ हुआ। फिर यह कथा कर्मघाट गई, फिर ज्ञानघाट फिर 'उत्तरकांड' में यह उपासना घाट पहुंची। तुलसी का घाट शरणागति, प्रपत्ति, दीनता का घाट है। वे कहते हैं ज्ञान, मुक्ति, साधना शरणागति से शुरू होगी उसके कर्म सुंदर होंगे। शरणागति के बाद कर्म में और फिर कर्म करते-करते विवेक की प्राप्ति होगी। समझदारी और ज्ञान की प्राप्ति होगी। उसकी कथा, जीवन, ज्ञानयोग महान ऊंचाई को प्राप्त होगा। वह कैलासी शिखर प्राप्त करेगा।

तुलसी ने अपने गुरु से कई बार कथा सुनी। भाषाबद्ध करने का शिवसंकल्प किया। भरद्वाजऋषि के आश्रम में, तीरथराज प्रयाग में, परमविवेकी याज्ञवल्क्य महाराज के पास भरद्वाजजी ने जिज्ञासा की कि रामतत्त्व क्या है? समझ में नहीं आता। हमारे मन में जिज्ञासा हो तो परम विवेकी से पूछो यह तत्त्व कई लोगों को समझ में नहीं आता। सभी सवालों के जवाब नहीं दिए जाते। वक्त आने पर जाग्रत करे। लघु गुरु को आह्वान देता है! भारतीय मूल्य अक्षयवट है। अंग्रेजों ने इसमें तेजाब डाला है! वे भूल को मिटाना चाहते हैं! पर ये अक्षयवट है। है मतलब है। राम की कृपा बिना राम की प्रभुता नहीं जानी जाती।

आप माताजी को प्रसादीरूप सुवर्णमुकुट देते हैं। अच्छा किया। लेकिन कभी दो-तीन कुमारिकाओं का ब्याह करवा देना। उस दिन माँ को सच्चा मुकुट चढ़ जायेगा। यह तो करना ही है। पर वहां से प्रेरणा लेकर आपके यहां मध्यप्रदेश या गोधरा से काम करने आई हो ऐसी बहन-बिटियां ब्याह करने योग्य हो जाय तो उनके लिए भी कुछ करना। गौरी की पूजा सच्ची है। पर यह ज्यादा सच्ची पूजा होगी।

गुरु के यहां दरवाजे होते हैं, दीवारें नहीं

बाप, भगवती माँ चामुंडा की गोद में बैठकर इस पवित्र अनुष्ठान के दिनों में रामकथा 'मानस-चामुंडा' प्रेमयज्ञरूप संवाद रच रही है। कथा में जिनकी उपस्थिति रहती है ऐसे सब पूज्य चरणों में मेरे प्रणाम। मेरे प्रिय लोकविद्या के विद्याधरों को जय माताजी। अपने समाज के विविध क्षेत्र के सभी आदरणीय गुरुजन, मेरे भाईयों और बहनों। रूखड के जन्मदिन की बधाई हो। चौथी नौरात्रि रूखड के निर्माण और निर्वाण का दिन है। रूखड माने परिव्राजक संत। यह शास्त्रीय व्याख्या है। परिव्राजक माने बावला साधु, परमहंस। 'रूखड' लोकबोली का शब्द है। रूखड का अर्थ है चलता-घूमता। क्या फ़र्क पड़ता है? शिष्टभाषा परिव्राजक कहे या लोकभाषा रूखड कहे। साधु तो चलता भला। वसीम बरेलवी का शे'र है -

वो जहां भी रहेगा रोशनी फ़ैलाएगा।
चरागों को कोई अपना मकां नहीं होता।

दीए का अपना कोई स्थान नहीं होता। जहां दीया जलाएं वहीं पर उजाला हो जाय। रूखड माने परिव्राजक। घूमता-घामता। भटकता नहीं। जो अंदर से टूटता है वह भटकता है। जो बाहर से ठीक लगे पर अंदर से बहुत व्यभिचारिणी बुद्धि काम करती हो के भटकता है।

मेरे पास तीन-चार चिठ्ठियां है, 'बापू, आज हमारा नाम बदल डालिए। मेरा नाम कपिल है। पर अब कपिल रूखड कर डालिए!' एक ने लिखा यह नाम मेरे मकान को दे दीजिए। शास्त्रीय मूल में परिव्राजक संत के लिए अनुभवियों ने प्रतीतिकर उच्चारण किया। अत: आज रूखड का दिन है। राम भी रूखड है। वे कहां गद्दी पर बैठे? उन्हें घूमते रहना था। वे समाज में अहिल्या की प्रतिष्ठा करना चाहते थे। केवट को प्रतीति करानी थी कि वे निर्धन नहीं है। वस्तुरूप में हमारे पास कुछ भी नहीं है। पर ईश्वर भी हम से मांगे और हम दे सके ऐसा कोई तारकतत्त्व हमारे पास है। केवटों को प्रस्थापित करना था। भालू, बंदर, आदिवासी, बनवासी, गिरिवासी, उपेक्षित, तिरस्कृत, निम्नतम आदमी इन सबका समाज में पुन:स्थापन करना था। राम चौदह बरस वन में विचरण करते रहे, नहीं तो शासक होते। चित्रकूट और अयोध्या में भरत सह सभाजन एकत्र हुए उसमें प्रवचन हुए उस पर से पता चलता है कि राम शासक होते। यह सर्वानुमत से तय था। राघव को लगा, यहां बैठे रहने से रामराज्य नहीं होगा। गांधीजी पूरा देश घूमे थे। स्वराज लाने से पूर्व समग्र देश में परिभ्रमण किया था। उन्होंने जनजन की गरीबी देखी थी। निम्नतम जीव के आंसू देखे थे। राम भी रूखड है। शंकर और कृष्ण भी रूखड है। सत्य सदैव रूखड है। प्रेम और करुणा भी सदा रूखड है। वे किसी के कब्जे में, बंधन में न रह सके।

'रामायण' ने क्या किया? आज क्यों 'रामायण' प्रासंगिक है? क्या 'रामायण' मोक्ष देती है? जो चाहे उसे अवश्य दे। स्वर्ग दे? यदि स्वर्ग जैसा हो तो अवश्य दे। मेरे लिए स्वर्ग प्रश्नार्थ है। स्वर्ग है या नहीं इसका मुझे पता नहीं। अभी तो स्वर्ग माँ चामुंडा की गोद में उतरा है। उनकी मुठ्ठी में है। स्वर्ग में ऐसे दूधपाक, खमण, पूरीवाले रसोईघर

होंगे? वहां ओस भी नहीं पड़ती। जहां ओस न पड़े, जिन्दगी न कटे। जहां आंसू न पड़े वहां जीने की मज़ा न आए। स्वर्ग में आंसू, ओस नहीं है। कहने दीजिए, स्वर्ग में पसीना नहीं है। मेरा लोककवि कहता है 'मारुं वनरावन रूडुं, हुं वैकुंठ नहीं रे आवुं।' बापू, स्वर्ग प्रश्नार्थ है। अभी चामुंडा के धाम में स्वर्ग है।

'रामायण' ने क्या किया? आज क्यों 'रामायण' प्रासंगिक है? क्या 'रामायण' मोक्ष देती है? जो चाहे उसे स्वर्ग दे? यदि स्वर्ग जैसा हो तो अवश्य दे। मेरे लिए स्वर्ग प्रश्नार्थ है। स्वर्ग है या नहीं इसका मुझे पता नहीं। अभी तो स्वर्ग माँ चामुंडा की गोद में उतरा है। उनकी मुठ्ठी में है। स्वर्ग में ऐसे दूधपाक, खमण, पुरीवाले रसोईघर होंगे? वहां ओस भी नहीं पड़ती। जहां ओस न पड़े, जिन्दगी न कटे। जहाँ आंसू न पड़े वहां जीने की मज़ा न आए। स्वर्ग में आंसू, ओस नहीं है। कहने दीजिए, स्वर्ग में पसीना नहीं है। मेरा लोककवि कहता है, 'मारुं वनरावन रुडुं, हुं वैकुंठ नहीं आवुं रे।' 'बापू, स्वर्ग प्रश्नार्थ है। अभी चामुंडा के धाम में स्वर्ग है।'

प्रथम दिन, माँ भगवती के शक्तिरूप के संक्षिप्त दर्शन किए। दूसरे दिन भगवती क्षमारूप के, तीसरी रात माँ सरस्वती के बुद्धिरूपेण। आज चौथी रात्रि में विद्यारूपेण संस्थितां।' हे भगवती, हे चामुंडा, हे पराम्बा, तू विद्यारूप में बिराजमान है। विद्या पांच प्रकार की है। तांत्रिक में तो मैली विद्या भी आ जाती है। उसे छू भी नहीं सकते। आप भी छूए नहीं। दूसरों के खड्डे में पड़ने से हमारे कपड़े बिगड़ेंगे। इक्कीसवीं सदी में यह सब निकल जाना चाहिए। मैले को विद्या नहीं कहते। भगवती विद्यारूपेण है। अनेक विद्या है। गिनती नहीं कर सकते। गिनती आए तब विवाद शुरू हो जाये। गोस्वामीजी तो संवाद के साधु है। अत: गिनती में नहीं पड़ते।

गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई।
अलप काल बिद्या सब आई।।

राम ने सभी विद्याएं प्राप्त की। गिनती के विवाद को स्थान नहीं रहने दिए। दशरथजी ने कितनी रानियां की थी यह विवाद है। एक गिनती अनुसार सात सौ है! एक समय था तब ऐसा होता होगा! पर तुलसी इसमें नहीं पड़ते। वे अपने ग्रंथों में संकेत देते हैं। 'मानस' में तो मर्यादा है। 'मानस' तो लोक और श्लोक बीच बहती पवित्र गंगाधारा है। 'कौसल्यादि नारी प्रिय' बस इतना लिखा। गिनती तो व्यापारी करते हैं, साधु नहीं करते। साधु होना गौरव है।

यह चामुंडा पांच विद्यारूपिणी है। एक वेदविद्या, दूसरी भगवान कृष्ण 'विद्याओं में मैं अध्यात्म विद्या हूं' ऐसी विभूतिरूप में स्थापना करते हैं वो अध्यात्मविद्या। तीसरा, 'गीता' का आश्रय लूं। 'ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुन-विषादयोगो नाम प्रथमोऽध्याय:।' चौथी पतंजलि की योगविद्या। मैं प्रसन्न हूं पांचवीं सिरमौर लोकविद्या से। 'या देवी सर्वभुतेषू' हमने तीनों के फ़ल देखें। हम विचार करें, संवाद करें। ये पांचों विद्या के फ़ल है। ब्रह्मविद्या का फ़ल क्या है? यह ब्रह्मविद्यारूपिणी है। वेदविद्यारूपिणी है। लोकविद्यारूपिणी है। अध्यात्मविद्यारूपिणी है। योगविद्यारूपिणी है। इसमें जो ब्रह्मविद्यारूपी चामुंडा को देखेंगे तो क्या फ़ल होगा? हम न चाहे तो भी फ़ल मिलता है। कृष्ण जो कहते हैं, 'मा फ़लेषु कदाचन।' तू फल की इच्छा मत रख। तू इच्छा न रखे तो भी फल मिलेगा। कृष्ण ने कहा, कर्म किए जा। फल की इच्छा न कर। फल तो मिलेगा ही। तूने बोया है तो पायेगा ही। अपेक्षा मत रखना। मैंने बोया है तो मेरी पीढ़ी आम्ररस पीयेगी। रस ले ले, फ़ल की बात छोड़। जिसे भजन करना हो उसे रस पी लेना है। मोक्ष का फ़ल, स्वर्ग का फ़ल, मुक्ति का फल ऐसी चिंता मत रख। नरसिंह महेता रस में राचते हैं।

राम सभामां अमे रमवाने ग्या'तां,
पसली भरीने रस पीधो रे।

बाप, ब्रह्मविद्या का फ़ल क्या है? संक्षेप में कहूंगा। जीव को धीरे-धीरे जानकारी होती है, मैं भी वही हूं। यह ब्रह्मविद्या का फल है।

सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा।
बारि बीचि इव गावहिं बेदा।।

ब्रह्मविद्या का फल है। जीव को स्वयं का अनुभव हो। बहुत कठिन है। पर जिन्होंने अनुभव किया है वे सच्चे हैं। ब्रह्मविद्या का फल है। जीव को ऐसा लगे कि मैं ही शिव हूं। शंकराचार्य ने बतलाया कि आप इतना कीजिए तो आप भी कह सकेंगे कि 'चिदानंदरूप: शिवोऽहम् शिवोऽहम्।' संक्षेप में, ब्रह्मविद्या का फल है ब्रह्मत्व का अनुभव करना। जिसे तुलसी कहते हैं, 'सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा।' 'उत्तरकांड'; ब्रह्मविद्या-वेदविद्या का फल है। वेदविद्या जीवन के रहस्यों को समझाती है। वेदों ने जितने रहस्य खोले हैं ओर किसीने नहीं खोले। वेदों ने ओमकार से शुरूआत की। मैंने सुना है कि नासा ने रेकर्डिंग की है। एक हजार वर्ष पूर्व स्पेस में एक आवाज घूमती है वह आवाज ओमकार है। हिन्दुस्तान, हिन्दुस्तान है। आज एक हजार साल के बाद स्पेस में वह आवाज पकड़ी गई है। स्पष्टत: ओमकार नाद सुनाई देता है। तथाकथित लोक अभी तक पलने में सोए हुए हैं। ऋषिमुनियों के सामने ऊंगली उठाते हैं! पता नहीं, ओमकार कितना आदि-अनादि शब्द है। आज विज्ञान ने उसकी ध्वनि पकड़ी है। धर्म तो कहता ही था। गुरुनानक तो एकदम रीचार्ज कर गए 'ओमकार सत्नाम।' स्पेस में तीन बार ध्वनि गुंजती है। ऋषिसंतान और भारतीय के नाते बहुत खुश हुआ। वेदविद्या का फल जीवन के रहस्यों का उद्घाटन करना है। जीव को ब्रह्मतत्त्व का परिचय देना ब्रह्मविद्या का फल है। 'परचो' शब्द लोकभाषा का है जिसका अर्थ परिचय है। जगदंबा परचा करती है। कदम-कदम पर देती है। इक्कीसवीं सदी में झूठे चमत्कार नहीं चलेंगे। आज नई पीढ़ी और विज्ञान इसका स्वीकार नहीं करेंगे। परिचय दे, चमत्कार नहीं। सुबह सूरज उगता है इससे बड़ा चमत्कार क्या है? सूर्य की प्रथम रश्मि का स्पर्श पा कर कलियां खिलती हैं। कितना बड़ा विज्ञान हमारे सामने पड़ा है! पता भी न चले ऐसे रहस्य खुल जाते हैं। नेटवर्क द्वारा क्यों चमत्कार करें? इसमें क्या फायदा है यार?

माडी तारुं कंकुं खर्युं ने सूरज ऊग्यो।
जग माथे जाणे प्रभुताए पग मूक्यो;
कंकु खर्युं ने सूरज ऊग्यो।

आहा! माँ टीले से नीचे ऊतरी! प्रभुता कितना सुंदर नाम है! इससे ज्यादा सुंदर धरती पर कुछ नहीं है।

तो बाप, वेद के रहस्य खोले वह वेदविद्या है। वेद की छोटी-सी ऋचा कौन-सा रहस्य खोलती है? तीन शब्दों में देखें। वेद पर सब का अधिकार है। जिसके पास लोकविद्या हो उसे वेदविद्या की जरूरत नहीं। अधिकार नहीं ऐसा नहीं पर जरूरत नहीं। मैं चाहता हूं सभी वेद बोले। तीन-चार शब्दों में एक ऋचा-ऋग्वेद। जीवन के रहस्यों को वेद की छोटी ऋचा खोलती है। प्रथम दो शब्द 'नवोनवो।' सभी बोलिए। सभी ग्राम्यजन भी वेद बोल सकते हैं। इक्कीसवीं सदी में सब को छूट दीजिए। भेदों की दीवारें तोड़ डाले। भगवती श्रुति हमारी माँ है। उसकी गोदी में लेटकर हम सब को उसका दूध पीने का अधिकार है। बाप! माता, भाई, गुरुजन, गांव के भाई-बहनें सभी बोलिए। घर में से कोई कथा में न आया हो पर आप घर जाय तब पूछे, आज क्या हुआ कथा में? तब वेद की ऋचा सुनाइए-

नवोनवो भवतिजायमानोऽह्नां केतुरुषसामेत्यग्राम्।

मतलब कि यह चंद्रदेव हर रोज उगकर नवीनतम होता है। सूर्यदेव उगकर सब के सामने आते हैं। अर्थ यह है रोज तुझ में नया-नया जन्म लेता है। बहुत तात्त्विक अर्थ है। मेरे सामने जो आप कल बैठे थे वो आज नहीं है। कल के मोरारिबापू आज नहीं है। आज नए हैं। दीये में तेल या घी जलाए तब जो बाती जलती है तब क्षण-क्षण नया तेल जलता है। पहली बूंद जली वो नहीं रहती। क्षण-क्षण नया जलता है। पाश्चात्य विद्वानों ने कहा कि एक नदी में क्षण-क्षण नई नदी बहती है। वेद संकीर्ण नहीं है। जीवन के रहस्य खोलते हैं। तुलसी इसे सरल करते हैं। प्रेम रोज नया होता है। जीवन रोज नया होता है। एक पेड से एक कोंपल फूटे फिर जो दूसरी फूटे वह नई होती है। दूसरी पहले की नकल नहीं है। रोज नई फूटती है। रोज दूसरी

औस बिन्दु नई होती है। रोज नवीनता जीवन का रहस्य है। मेरा अनुभव है कि मेरे श्रोता हंमेशा नए लगते हैं। आपको भी लगे व्यासपीठ रोज नई है। मेरी एक-एक विद्या का उपासक रोज नया लगता है। हम एक ही नदी में एक ही समय पर दो बार नहीं स्नान कर सकते। पैर रखे तब वही पानी आगे निकल जाता है। गीर के जंगल में झरनें बहते हैं तब कल जो झरनें थे, आज वही नहीं है। वेदविद्या हमारे जीवन के रहस्य खोलती हैं।

तीसरी योगविद्या है। वह मन और शरीर की तंदुरस्ती देता है। हमें योग की बड़ी व्याख्या में नहीं जाना है। योगविद्या का स्पष्ट परिणाम है शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य। ये दोनों फल पतंजलि योगविद्या के हैं। आप योग कीजिए। पूजनीय रामदेवबाबा ने तो कितना सरल कर दिया है! योग को गुफा में से मैदान में ला दिया। भजन के लिए शारीरिक तंदुरस्ती जरूरी है। 'रामायण' में स्पष्ट लिखा है, बिना शरीर के भजन नहीं हो सकता। शरीर का जतन कीजिए। योगा करते हो तो करते रहियेगा। मुझे अनुकूल नहीं, इसीलिए नहीं करता। मुझे तो व्यासपीठ से गाए, आनंद करें इसी में मेरे योग संपन्न होते हैं। शारीरिक और मानसिक तंदुरस्ती योगविद्या का फल है।

चौथी अध्यात्मविद्या है। मेरी दृष्टि से सत्य, प्रेम, करुणा ही अध्यात्मविद्या है। हमारे पास की अध्यात्मविद्या चाहे जितनी हो पर उसमें सत्य की मात्रा न हो। प्रेम के बदले अध्यात्मविद्या हमें गंभीर बना दे; करुणा के बदले कठोर बना दे तो ऐसा लगता है हमने विद्या अविद्या कर डाली है। अध्यात्मविद्या का फल सत्य, प्रेम और करुणा है। पांचवीं, लोकविद्या है। लोकविद्या तिनके से तरनेतर की ध्वजा सभी विभागों को जोड़ती है। 'रामचरित मानस' के 'अरण्यकांड' में जो संस्कृत है वह लोकसंस्कृत है। अत्रि ने जो स्तुति की है वे संस्कृत के नियमानुसार नहीं है पर वन्य संस्कृत है। लोकविद्या की संस्कृत है-

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

लोकविद्या इसका फल है। साहब, लोकविद्या सब को जोड़ती है। वेदविद्या अद्‌भुत है। बहुत ही तटस्थ और कूटस्थ न्यायानुसार वेद की इच्छा थी कि सब को एक करे। वेदविद्या के वाहकों ने सब को अलग रखा है। पर लोकविद्या ने किसी को अस्पृश्य नहीं माना हैं। शायद इसीसे लोकविद्या निकली है। अध्यात्मविद्या निकली होगी। इसके मूल में आदिवासी लोकबोली बोलनेवाला ऋषि बैठा है। लोकविद्या इन सभी विद्याओं की माता है। विद्या सब को एकत्र करती है।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

हे माँ, तू विद्यारूपिणी है। हम गुजराती में गाते हैं-

विश्वंभरी अखिल विश्वतणी जनेता,
विद्या धरी वदनमां वसजो विधाता।
दुर्बुद्धिने दूर करी सद्‌बुद्धि आपो।
माम् पाही ओ भगवती भवदुःख कापो।

पांच विद्या और उसके पांच फल। अब राम रूखड के जन्मदिन की ओर जाउं। पर एक पुरानी बात कहूं। 'बेचहिं बेद' जो विद्या बेचेंगे, मेरा भरत कहता हैं, उसकी जो दुर्गति होती है वही दुर्गति हमारी होगी। यदि मैंने राम बनवास की बात कैकेयी को कही हो।

बेचहिं बेदु धरमु दुहि लेहीं।
पिसुन पराय पाप कहि देहीं।।

'अयोध्याकांड' में भरत आत्मनिवेदन करते हैं। अश्रु बहा दे ऐसा आत्मनिवेदन है। माँ की गोद में सिर रखा है। इतने सारे पथिकों की जो दुर्गति होती है ऐसी मेरी हो। भरत कहते हैं, परमात्मा की विशुद्ध भक्ति छोड़कर जो भूतप्रेत की साधना करे और जो दुर्गति हो ऐसी मेरी हो। यदि मैंने राम के लिए बनवास और मैंने अपने लिए गद्दी प्राप्ति की हो इसमें यह पंक्ति आई है। वेद बेंचेगे, धर्म को दुह लेंगे, कर्म का शोषण करेंगे उसकी दुर्गति होगी। मैं छोटा था तब सावित्री माँ को गाय दुहते देखता था। तब दूध का नाद-मिल्क म्युजिक था। थान में पानी छिड़क, खाने को देगी, मनायेगी। हेतु है दोहना। कभी-कभी आदमी

प्रलोभन दिखाता है। थोड़ा खाना देगा। थोड़ा थान पर जल छिड़केगा। तो धर्म को लगेगा यह तो मुझे बहुत शुद्ध करता है। हेतु शुद्ध नहीं है। धर्म को दुह लेना है! मेरा भरत कहता है, दुर्गति होगी। दुर्गति माने नर्क और सुगति माने स्वर्ग। यह गलत है। दुर्गति माने खुशी गायब हो जायेगी और सुगति माने खुशी दिन दुगुनी, रात चौगुनी हो जायेगी। तुलसी के रूपक की हमें इर्दगिर्द परिक्रमा करनी पड़ती है। तब सब सोचना पड़े कि इतना कुछ देंगे पर दूध ज्यादा ले लेंगे! धर्म का दोहन करना है! पोषण नहीं, शोषण करना है। प्रस्तुति मेरी है, शब्द मेरे गोस्वामीजी के है। मैं शब्द पर जीवित हूं। शब्द पर ज्यादा भरोसा रखता हूं। ध्यान रखिए, शब्द हमें श्राप न दे। शब्द व्यर्थ न जाय। हमारे शब्दों से समाज का शोषण नहीं होना चाहिए, पोषण होना चाहिए। विद्या बांटनी चाहिए। जो माँ सरस्वती को नहीं बेचेंगे महालक्ष्मीजी उनके कदम चूमती आयेगी।

जगदंबा के पति महादेव कैलास के वेदविदित वृक्ष की छांया में अपने हाथ से आसन बिछाकर सहज बिराजमान है। पार्वती योग्य अवसर जानकर सामने आई। शंभु ने देवी का स्वागत किया। निकट आसन दिया। गिरिजा ने कहा, महाराज, गत जन्म में मैं दक्षपुत्री थी। रामचरित्र पर संदेह किया। मेरा त्याग हुआ। मैं पिता के यज्ञ में जल मरी। दूसरा जन्म हिमालय के यहां हुआ। एक जन्म के बाद भी भ्रान्ति का अंत नहीं आया कि राम ब्रह्म है कि साधारण मानव है? खुलासा दीजिए। मुझे रामकथा कहकर वहम दूर कीजिए। महादेव ने प्रसन्नता से शब्द कहे-

धन्य धन्य गिरि राजकुमारी।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।

धन्य हो गिरिजाकुमारी, धन्य हो। आपके समान जगत में कोई उपकारी नहीं है। आपने मुझसे ऐसी कथा पूछी है कि जो समस्त लोक को पवित्र करनेवाली गंगा है। हे देवी, भगवान की कथा निमित्त होकर जगत पर उपकार किया है। कैलासपीठ पर से महादेव रामकथा का आरंभ करते हैं। देवी, आप राम के बारे में पूछ रही है तो मूल रामतत्त्व क्या है?

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना।
कर बिनु करम करइ बिधि नाना।।

तुलसी पूरा वेदांत लेकर चौपाई में उतरते हैं। यह निराकार ब्रह्मतत्त्व है। भक्तों के प्रेमवश होकर अवतरित होते हैं। ब्रह्म को कार्य-कारण शब्द लागू पड़ता है फिर भी किसी न किसी कारण से जगत में लीला करने आते हैं। पहला कारण ईश्वर को अवतार लेना है। दूसरा, जय-विजय ने सनतकुमारों को सती वृंदा ने दिया श्राप; तीसरा कारण मुनि नारद ने भगवान नारायण को दिया श्राप; चौथा कारण, मनु-शतरूपा ने नैमिषारण्य में प्रभु की तपस्या की। भगवान ने आशीर्वाद दिए। इसी कारण प्रभु पुत्ररूप में जन्म लेते हैं। पांचवां और आखिरी कारण प्रतापभानु को मिला श्राप और रावण का जन्म हुआ। अरिमर्दन कुंभकर्ण हुआ। मंत्री धर्मरुचि विभीषण हुआ।

रामकथा में रावणकथा पहली बताई है। प्रथम रात, फिर दिन। अतः निशिचर वंश की कथा प्रथम है। फिर सूर्यवंश की कथा है। तीनों भाईयों ने बहुत तप किया। तीनों ने दुर्लभ वरदान प्राप्त किए। रावण अपनी शक्ति और वरदान द्वारा प्राप्य सिद्धि का दुरूपयोग करने लगा है। पूरी पृथ्वी त्रस्त है। धरती ने गाय का रूप धारण किया है। ऋषिमुनि-देवता सभी ब्रह्मा के पास गए हैं। ब्रह्माजी ने पृथ्वी को आश्वासन दिया कि हम सब मिलकर प्रभु को पुकारे। सामूहिक प्रार्थना शुरू होती है। आकाशवाणी ने कहा, 'देवतागण, धैर्य धारण कीजिए। मैं अपने अंश सह प्रगट होऊंगा।'

तुलसी की लेखिनी हमें अयोध्या ले जाती है। त्रेतायुग का रघुकुल है। रघुवंश और उसके वर्तमान सार्वभौम महाराजधिराज दशरथजी है। कौशल्या आदि रानियां है। सब ठीकठाक है। राजा को एक पीड़ा है कि मुझे संतान नहीं है। दुनिया को मुझसे शिकायत है। मैं किससे कहूं? हमें मार्गदर्शन देने तुलसी कहते हैं, आज राजद्वार ने गुरुद्वार की ओर यात्रा की है। गुरु की शरण में जाइए। सुख-दुःख के समिध लेकर आए हैं। गुरु के पास खाली हाथ नहीं जाते। समिध लेकर गए हैं। उपनिषदी

विचार है। एक द्वार ऐसा रखिए जहां दिल खोलकर बात कर सके और वह है गुरुद्वार। वशिष्ठद्वार। वशिष्ठ माने वरिष्ठद्वार जो समाज में विशिष्ट हो उसका द्वार खटखटाइए। जिस-तिस के घर न जाय। हम आहट दे और उसे पता चल जाय कि मेरा आश्रित आ रहा है। माला शुरू हो जाय। ऐसे मार्गदर्शन में जाने के लिए 'रामायण' कहता है। उसे धर्म की पोषाक पहनाकर झूठा रूप मत दे देना। गुरुद्वार बहुत बड़ा होता है। गुरु के यहां द्वार होते हैं, दीवारें नहीं।

दशरथजी आए हैं। गुरुदेव को प्रणाम किए। सुख-दुःख कहे। शृंगी आए। पुत्र कामेष्टियज्ञ विधि छांदोग्यानुसार हुआ। यज्ञ में से जो खीर निकली है यज्ञपुरुष ने वशिष्ठ को दी। उन्होंने राजा को दी। दशरथ रानियों में प्रसाद बांटते हैं। आधी खीर कौशल्या को, पाव कैकेयी को और पाव सुमित्रा को दी। रानियों ने प्रसाद लिया है। तुलसी कहते हैं, तीनों देवियां सगर्भास्थिति का अनुभव करती हैं। पंचाग अनुकूल हुआ है। चैत्रमास, त्रेतायुग है। मध्याह्न का सूरज है। मंद, सुगंध, शीतल पवन है। नदियों मे अमृत बहता हो ऐसा अनुभव हो रहा है। समग्र अस्तित्व हरि बधाई के लिए उत्सुक है। आकाश में से पुष्पवृष्टि हो रही है। स्वर्ग के देवता, पृथ्वी के ब्राह्मण देवता और पाताल के नाग देवताओं ने भगवान की जन्मस्तुति शुरू कर दी है। उस समय पूरे जगत में जिनका निवास है, ऐसे ब्रह्मतत्त्व भगवत्तत्त्व, ईश्वरतत्त्व, परमात्मतत्त्व जो भी कहे, माँ कौशल्या के महल मे चर्तुभुज विग्रह लेकर प्रगट हुए हैं। गोस्वामीजी बधाई गाते हैं।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

पूरा भवन प्रकाश से आलोकित है। माँ ने चतुर्भुज विग्रही परमात्मा का दर्शन किया। माँ को ज्ञान हुआ। परमात्मा ने स्मित किया। माँ ने मुंह फेर लिया। भगवान ने पूछा, 'माँ, मैं आया और आपने मुंह फेर लिया?' माँ ने कहा, 'प्रभु, आप आए। स्वागत है। परंतु आप वचन चुके हैं। आपने कहा था, मनुष्यरूप में आऊंगा। बेटा बनकर आऊंगा। आज दोनों वस्तु टूटी है। पुत्र नहीं, बाप बनकर आए हैं। नर नहीं, नारायण बनकर आए हैं। मुझे ये पसंद नहीं है। आप मनुष्य बन जाए।' भगवान ने हाथ जोड़े। पूछा, 'अब तो मनुष्य लगता हूं।' 'मनुष्य लगते हैं पर पुत्र नहीं, बाप लगते हैं। बच्चा छोटा होता है। पर बातें बड़ों जैसी करते हो। शिशु तो रुदन करता है। आप रुदन करे।' परमात्मा बालरूप में कौशल्या की गोद में रुदन करने लगे। दूसरी रानियां आवाज़ सुनकर सभ्रम दौड़ी आई कि यह क्या है? ब्रह्म आये पर सब को भ्रम हुआ। शिशु को रुदन करता देख दासियां दौड़ आई! दशरथजी को बधाई देते कहा, बधाई हो! पुत्रजन्म हुआ है। पुत्रजन्म की बात सुनकर दशरथजी को ब्रह्मानंद हुआ। मेरे घर ब्रह्म आए! पर निर्णय कौन करे? कहा, गुरु को जल्दी बुलाइए। वशिष्ठजी आए। निर्णय हुआ कि यह ब्रह्म ही है। सकल रूप में आया है। फिर राजा की अनुभूति शीघ्र ही बदल गई। आनंदित राजा ने कहा, साजिंदो को बुलाइए। बधाई दीजिए। उत्सव मनाइए। माँ चामुंडा की तलहटी में बैठकर, मेरी व्यासपीठ पर से रामजनम की

प्रेम रोज नया होता है। एक पेड़ में एक कोंपल फूटे, दूसरी फूटे वह नई होती है। वह नकल करने के लिए नहीं फूटती। औस की दूसरी हर बूंद आए वह नई ही होती है। रोज नवीनता जीवन का रहस्य है। मेरा अनुभव कहता है, मेरे श्रोता रोज नए लगते हैं। आपको भी ऐसा लगेगा, व्यासपीठ रोज नई है। मेरी एक-एक विद्या का उपासक रोज नया लगता है। हम एक ही नदी में एक ही समय पर दो बार स्नान नहीं कर सकते। पांव रखे तब तक वही पानी निकल जाता है। गीर के जंगल में कल जो झरनें बहते थे वही आज नहीं होते।

इक्कीसवीं सदी में अहिंसारूपेण माँ की आवश्यक्ता है

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

मेरी आंखें देखने की इच्छा रखती है बाप, आपकी शुभकामना लेके कि अब माँ का रूप अहिंसारूपी होना चाहिए। और माँ अहिंसारूपी नहीं थी ये कभी नहीं मानना। माँ अहिंसारूपी थी और होगी भी। कोई विशेष कारणसर माँ ने खडग धारण किया होगा; त्रिशूल धारण किया होगा। दुनिया में कोई भी डोक्टर हिंसक नहीं होता परंतु ओपरेशन करने के लिए उसे हथियार लेना पड़ता है। स्वभाव से हिंसक हो तो डोक्टर पदवी युनिवर्सिटी को देनी ही नहीं चाहिए। डोक्टर जब ओपरेशन करने निकलता है तब आधा भूत जैसा दिखता है! हरे कपड़ें पहने होते हैं। मुंह बांधा होता है। ये मुझे तो लगभग भूत जैसे ही दिखतें है! परंतु वो भूत नहीं है। थोड़े समय के लिए जो बिनजरूरी वस्तुएं मरीज़ के शरीर में आ जाती है उन्हें निकालने के लिए डोक्टर को थोड़े समय के लिए चाकू-कैंची लेनी पड़ती है। मरीज़ को तंदुरस्त करने के लिए ऐसा करना पड़ता है। मेरी माँ चामुंडा भगवती ने जब-जब खडग-त्रिशूल हाथ में लिया होगा तब ऐसा लगा होगा कि समाज की देह में कोई रोग है; समाज के शरीर में अकारण वस्तुएं जमा हो गई है जिन्हें ओपरेशन से दूर करना चाहिए। जिस कारण माँ ने कभी चंडमुंड के लिए, कभी महिषासुर के लिए, कभी रावण के लिए हथियार लिया होगा। आज तक मैंने नहीं देखा कि ओपरेशन करने के बाद जब डोक्टर घर वापस गया होगा तब अपनी ड्रेस या हथियार लेके गया हो। 'रामचरित मानस' में भवानी का जो भवन है उसमें हथियार कहीं नहीं है।

गई भवानी भवन बहोरी।
बंदि चरन बोली कर जोरी।।

समाज को कभी ये नहीं भूलना चाहिए कि हिंसा केवल शस्त्रों से ही नहीं होती। शास्त्र भी जब कट्टरता की पोशाक पहनते हैं तो हिंसा करने में पीछे नहीं रहते। दुनिया में ज्यादातर युद्ध धर्म के कारण ही होते हैं। धर्म के नाम पर हुए युद्ध की तुलना में सत्ताप्राप्ति युद्ध की संख्या कम है। ये मेरा सर्वे नहीं है, यूनो का, विश्वसंस्थाओं का सर्वे है। मैं तो खुश हुआ कि यूनो और विश्वसंस्था ने दो अक्टूबर को गांधीजी के नाम के साथ 'अहिंसादिन' डिकलेर किया। स्वाध्याय के प्रणेता ब्रह्मलीन पूज्य पांडूरंगदादा, उनके मुख से कभी सुना कि एक हाथ में तलवार और एक हाथ में पवित्र कुरान लेके धर्म का प्रचार नहीं हो सकता, एक हाथ में रिवोल्वर और एक हाथ में 'गीता' लेके प्रचार नहीं हो सकता। धर्म के कारण बहुत से युद्ध हुए। और इसी कारण मेरी व्यासपीठ माँ को अहिंसारूप में देखना चाहती है। माँ तू स्वतंत्र है। तुझे ऐसा लगे कि समाज में ओपरेशन जरूरी है तब तू तेरे संकल्प में से खड़ी हो कर रोगों का निवारण करेगी पर माँ तू हमें ऐसी सद्‌बुद्धि दे कि हम तुझे अहिंसारूप में देखे। नये गीतों की रचना करे, जिनके केन्द्र में अहिंसा हो।

गांधीबापू अपना व्यक्तिगत सिद्धांत देते हैं कि 'भगवद्‌गीता' मेरी दृष्टि से अनासक्ति योग है। पर ये अनासक्ति योग नहीं, वैष्णवों से पूछो तो कहेंगे कि 'भगवद्‌गीता' शरणागति का ग्रंथ है। और जिनके दिमाग में युद्ध और हिंसा का

कीचड़ भरा हो वही लोग 'भगवद्गीता' का अर्थ लगाएंगे कि कृष्ण ने कहा था कि युद्ध करने का निर्णय कर! मैं आपसे बिनती करता हूं, दो ग्रंथ है अपने पास 'भरद्वाज मीमांसा दर्शन' और 'आंगीरस मीमांसा दर्शन।' कभी हाथ में आये तो श्रद्धा से नहीं तो ऐसे ही देखना। इसमें से उत्तर मिलेगा। उसमें लिखा है कि भगवती जब भी बोली है तब उनकी वाणी के एक ही अर्थ नहीं निकलते हैं। उनकी वाणी में सच्चिदानंद लहरी होता है। माँ बोलती है तब अनंत जीवन उनकी वाणी का पहला लक्षण। अनंत ज्ञान दूसरा लक्षण। और अनंत आनंद वाणी का तीसरा लक्षण है। इसलिए सच्चिदानंद भगवती की वाणी है। मेरी दृष्टि से मेरे व्यक्तिगत जीवन के विकास के लिए 'रामायण' का कोई भी अर्थ करने बैठ जाऊं ये मुझे अधिकार है। पर इसका अर्थ ये नहीं कि मोरारिबापू ने 'रामायण' का सर्वांगी अर्थघटन कर दिया। सबका अपना-अपना अर्थघटन होता है। हर प्रकार से देखना चाहिए। अपने यहां बहुत ही सरस बिधि ऋषिमुनियों ने बताई है कि किसी के दर्शन करने जाए तब हम उसकी परिक्रमा करते हैं। परिक्रमा का अर्थ है कि आप जिसे पैर लगते हो, जिनके पैर छू रहे हो, चारों तरफ देखकर अनुभव करके दूसरी बार पैर छूना। ये सर्वांगी दर्शन की प्रक्रिया भारतीयों ने दी है।

रामतीर्थ वेदान्त का अद्भुत महापुरुष। इन्हें कोई पैर लगे, गांव का व्यक्ति आए और पैर छूए तो स्वामीजी पहले मना कर दे। कहे, मैं अभी और जीनेवाला हूं और तुम्हें भगवान सौ वर्ष का करे पर मुझे सीधा पैर नहीं लगे। यहां रहने की, खाने की व्यवस्था है। तू एक सप्ताह रहकर सब जगह से मेरी जानकारी प्राप्त कर। कोई कमी तो नहीं! फिर मेरे पैर छूना, वो भी मैं इस लायक हूं या नहीं ये जानकर। परिक्रमा कोई मोर्निंग या इवनिंग वोक नहीं है। परिक्रमा जागरण का वोक है। हमको देव को हर तरफ़ से देखना है। हम व्यासपीठ की क्यों परिक्रमा करते हैं? मुझे आनंद है कि ये परंपरा तलगाजरडा ने शुरू की है। व्यासपीठ पर जब हमारे पूर्वज आके और नमन कर के विराजमान होते थे। उन्होंने ही मुझे कहा था व्यासपीठ को हर तरफ से देख लो। ये कहे वो सच होता ही है ऐसी अंधी दौड़ नहीं लगाना। कच्छ में जब भूकंप आया तब मेरा एक वक्तव्य था। मैं सीधा इलाहाबाद से वहां गया। मेरा पहला वक्तव्य था कि मंगलभवन में से अमंगल निकलता ही नहीं है। इसके पीछे हरि का कुछ हेतु होगा। कुछ नवसर्जन छुपा होगा। हमारी आंखें कब देख सकती है? तो माँ को हर तरफ से देखना चाहिए।

तो माँ तो है अहिंसक। राम अहिंसक है। कृष्ण अहिंसक है। पर कभी-कभी महान ओपरेशन करने के लिए तो कभी चंडमूड तो महिसासुर के लिए हथियार लिए होंगे। नहीं तो माँ का मूल रूप तो करुणा है। वह करुणामूर्ति है। गांधीबापू ने बहुत काम किये। गांधी भी जन्मजात अहिंसक थे बाप! इसलिए पतंजलि के व्रतों को उन्होंने स्वीकार्य किया। यम-नियम जब उन्होंने स्वीकारे तब सत्य से ऊंचा उनके लिए कुछ नहीं था। सत्य के बाद के क्रम में गांधीजी ने कोई वस्तु रखी तो वह अहिंसा है और इसीलिए-

सत्य अहिंसा चोरी न करवी,
वणजोतुं नव संघरवुं.
ब्रह्मचर्य ने जाते महेनत
कोई अडे ना अभडावुं...

तो बाप, अहिंसा को दूसरा स्थान दिया है। 'रामचरित मानस' में खगपति गरुड के बुद्धपुरुष कागभुशुंडि के पास सात प्रश्न है उनमें से एक प्रश्न है कि 'इस दुनिया का श्रेष्ठतम धर्म कौन-सा है?' 'रामायण' जगत इस सात प्रश्नों से परिचित है। हे बुद्धपुरुष, हे कागऋषि, आपकी दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ धर्म कौन-सा? कागभुशुंडि कहते हैं -

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।
पर निंदा सम अघ न गरीसा।।

और अपने यहां देवी-देवताओं के हाथ में शस्त्र दिखाये हैं। स्तुति में इसके भरपूर वर्णन है। परंतु दूसरों को मारने के लिए शास्त्र नहीं थे। किसी को किसी कारण के बिना मारा जाये उनके रक्षण के लिए शस्त्र थे। तो माँ का मूलरूप परम हिंसामुक्त है। पचपन साल से आपके सामने गला फाड़के गायन करता हूं तो इतना तो आपके पास से मांग सकता हूं कि हिंसा का त्याग करो। देवस्थानों में हिंसा बंद हो। धर्म के नाम पर हिंसा बंद हो। सीमाओं के लिए हिंसा बंद हो। समझदारी आनी चाहिए क्योंकि युगों से चली ये हिंसा का कोई परिणाम नहीं निकला। बदले की भावना नहीं होनी चाहिए। अभी चार दिन बाकी है। विचार करना, किस बात का बदला लेना? माँ अहिंसारूपेण है। हम सभी जानते हैं कि हमारी माँ कभी नाराज होती है। उसे बहुत महत्त्व का काम हो और बच्चा जिद्द करे तो एकाद थप्पड़ मार भी दे पर सब को पता है और मेरा भी अनुभव है कि बच्चे रोये उनसे तीन गुना माँ रोती है क्योंकि स्वभाव से अहिंसक है।

जिनको धर्म के 'ध' का भी पता नहीं होता, खाली अधध ही किया है, समाज में ऐसे लोग बोलते हैं कि राम के हाथ में शस्त्र थे, हिंसा करते थे! कृष्ण के हाथ में सुदर्शन! अरे, धर्म के 'ध' का ज्ञान नहीं, क्या कहोगे? राम का वर्णन तो पढ़ो! झूठे सिद्धांत दे-दे कर समाज को मार रहे हो उसका क्या? झूठे नियमों के द्वारा समाज को गलत रास्ते पे ले जा रहे हो उसका हिसाब कौन देगा? हिंसा सिर्फ़ हथियार से ही नहीं होती। हथियार से हुई हिंसा तो भर जाती है लेकिन गलत सिद्धांतों की हिंसा कभी नहीं भरती। हो सकता है, कृष्ण को फिर से कहीं दुबारा आना पड़ेगा! कभी बहन-बेटी, भाई-बहनों, माँ-बाप में थोड़ी दुश्मनी हो तो उसे हिंसा का रूप नहीं देना मेरे बाप! बावा तुमसे भीख मांग रहा है। मेरी तामडी में इतना डालना और देखना ये चामुंडा कैसी रूपाली लगेगी! गरबा गायेगी। चामुंडा को पहचानोगे तो द्वेष चला जायेगा।

कल मेरे पास जिज्ञासा थी कि गरबा और गरबी में क्या अंतर? मैंने गांव देखे हैं। दर्शन करके कहता हूं कि मेरे गांव तलगाजरडा में रामजी मंदिर में एक ही जगह गरबी होती थी। गरबी मतलब लकड़ी की बनाई हुई गरबी। उसमें मैंने तोरण बांधे थे। उसका एक आनंद था। हमारे फूलचंददादा थे जैन, उन्हें कागज के फूल बनाना आता था। हम लगाते थे। उसमें सभी माताओं की छबि होती थी। ये गरबी थी। केन्द्र में गरबी रखी जाती और चारों तरफ गरबी खेलते थे। गरबी नारी जाति और गरबो नर जाति है। इन दोनों का अद्वैत दर्शन गरबा और गरबी का उजाला है। मैंने तलगाजरडा में देखा कि लगभग पुरुष गरबी लेते और बहनें गरबा लेती थी। आप देखो तो खरी एकता। जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं 'न मे मृत्युशंका न मे जातिभेद।' मुझे नर या नारी जाति का भेद नहीं है। अब तो बहुत नवरात्रि उत्सव होते हैं। जो शस्त्र से नहीं मारते लेकिन शास्त्रों के गलत अर्थ से मारते हैं! ये गरबी की जगह कुछ ओर ही रखते हैं! कुछ तो विचारो! गरबी की जगह पर गरबी ही होनी चाहिए; माता ही होनी चाहिए। फिर जैसी जिसकी श्रद्धा। परेशानी क्या हो सकती है? गांव में सभी मोटा कोटडा जाते हैं। बहुत-सी गांव की बहनें दंडवत् करती जाती है। पुरुष भी दंडवत् करते हैं। बहुत-से लोग मुझे कहते हैं कि ये शरीर को कष्ट दे रहे हैं लेकिन मैं सोचता हूं कि इनकी आलोचना किस लिए? जैसी जिसकी श्रद्धा। ठीक है, श्रद्धा गुणातीत होती है। समझदारीपूर्वक हो ये भी जरूरी है। तो बाप, हिंसा अनेक प्रकार से होती है समाज में। हथियारों से माँ का शोभन होता है पर माँ के हथियार मारने के लिए नहीं, तारने के लिए है। और हथियार तो एक प्रकार का शृंगार है। नहीं तो माँ ने महिसासुर को मारने के लिए खडग लिया नहीं होता। तो अहिंसारूप हमारे सामने रहे बाप! इक्कीसवीं सदी में अहिंसारूपेण माँ की आवश्यक्ता है। क्योंकि 'रामायण' कहती है-

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।

तुलसीदास ने कहा है। 'अहिंसा परमोधर्म' हो गया। पर अहिंसा में माँ के सिद्धांतों को स्वीकारो। तुम्हारे सामने कोई बालक, बहन-बेटी, पीड़ित आये और तुम उनके सामने मुस्कुराओ नहीं बल्कि मूंह चढ़ाके बैठ जाओ इससे तो एक-दो थप्पड़ मार दो वो अच्छा है। बहुत-से लोग हंसते ही नहीं! मुस्कुराओ तो सही! हिंसा के अनेक प्रकार है। और हिंसा बहुत सूक्ष्म भी है। तुम बिना कारण किसी के साथ दुश्मनी रखो तो हिंसा ही कर रहे हो। फिर मलककर पूछो तुम कि दुश्मनी के कारण मैं गलत कमेन्ट करता हूं, उस दिन आप हिंसा कर रहे होते हो। मैं ऐसा करता हूं तो हिंसा ही करता हूं। समाज में जन्मजात घृणित जीवन मिला है, ये हलका है, ये सब निकाल दो। बहुत ज्यादा नहीं चलेगा। फिर तुम गलत साबित हो इससे पहले निकाल दो। नयी पीढ़ी तैयार हो रही है। या तो मेरी व्यासपीठ जिस तरह से काम कर रही है ये सब सहन नहीं कर सकेंगे। जब १००८ 'रामायण' में मैंने नर्मदाशंकरबापा को पैर छूकर कहा कि मैं हरिजन भाई-बहनों के पास आज आरती उतरवाने वाला हूं। आप नौ दिन से रामकथा करा रहे हो लेकिन मैं ये घोषणा किये बिना नहीं रह सकता। तो दादा आपको कोई परेशानी नहीं ना? आपको कोई तकलीफ़ हो तो आप पूजा करने से रोकना। साहब! कहां उनकी उम्र और कहां मैं लडका! मुझे उनके शब्द याद है। उन्होंने कहा, 'मुझे लगता है कि तू जो करता है, ठीक ही करता है। मैं आरती उतारने में खड़ा रहूंगा। और उस समय जिन्हें जन्मजात नीचेपन की छाप मिली थी, उसमें बहन-बेटी दौड़के आई। उस दिन मुझे लगा कि ये बहन-बेटी नहीं, जगदंबा दौड़कर आ रही है व्यासपीठ को आशीर्वाद देने। ये हम सब को करना है। क्यों? क्योंकि ये भेद भी हिंसा है।

बुद्ध जब विहार में निकले तो उन्हें पानी की प्यास लगी। एक गांव। वहां कूआ था। वहां लगभग दस-ग्यारह साल की बेटी पानी खींच रही थी और मटका भरके जाने की तैयारी कर रही थी। तभी वहां भगवान बुद्ध ने आकर दलितकन्या से पानी मांगा और कहा, बेटी पानी पिलाओ। बेटी ने पानी पिलाना चाहा लेकिन बुद्ध के कपाल को देख, चेहरा, छलकते बुद्धत्व को देख लड़की को लगा कि ये उच्च वर्ग का व्यक्ति है और बुद्ध को पता नहीं कि मैं दलित हूं। मेरा पानी पी कर ग्लानि हो उससे अच्छा मैं ही कह दूं कि मैं दलित कन्या हूं। और बुद्ध की आंखो में आंसू आ गये और बोले, मैंने तेरी जाति नहीं, पानी मांगा है। पानी बिनसांप्रदायिक है। पच्चीस सौ वर्ष पहले ये प्रयोग हुआ और पूरा जीवन गांधीबापू ने उसमें लगा दिया।

तो, हिंसा के सूक्ष्मरूप अनेक है। तीन रूप तो जगजाहिर है। जिनको शास्त्रीय रूप कह सकते हैं। एक है खुद से करी हिंसा। बहुत-से खुद नहीं करते पर दूसरों के पास कराते हैं, ये कारित हिंसा। कारित हिंसा पीछे रह कर होती है। तू उसका अपमान कर देना। हम नहीं बोलेंगे तू बोलना। और तीसरी हिंसा का नाम है अनुमोदित हिंसा। करते भी नहीं, कराते भी नहीं। और किसीने की हो तो अनुमोदन दे कि ये ही लगता है। ये बहुत अच्छे शब्द है। इसलिए कहता हूं कि हिंसा करना नहीं, दूसरों के पास भी नहीं करानी, और अनुमोदन भी नहीं करना।

'अहिंसारूपेण संस्थिता।' ये माँ का रूप स्थापित हो। अभी हम बहुत-से मंदिरों में नहीं देखते? जैसा समय हो उसके अनुसार ठाकोरजी पोशाक पहनते हैं। युद्ध का समय हो तो मिल्ट्री के कपड़ें! एक जगह तो मैंने देखा कि ठाकोरजी पटाखे फ़ोड़ रहे हैं! गांधीबापू का विचार आता है तो मंदिरो में टोपी पहनाते हैं। देशकाल के अनुसार देवता पोशाक पहनते हैं। तो देशकाल के अनुसार माँ भगवती को अहिंसारूप में क्यों न स्वीकारे? ये करना होगा। तो ही खुद हिंसा, करानेवाली हिंसा और

अनुमोदित हिंसा का विरोध होगा। और ऐसी चौपाई 'मानस' में से कहता हूं, हिंसा अफसोस ही देती है।

सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी।
जननि जनक गुर बंधु बिरोधी।।

भरतजी कहते हैं, हे माँ, व्यक्ति की गैरहाजरी में पीछे से उसका ही व्यक्ति कुछ और बोले ये अफसोस करने लायक है। इस प्रमाण से व्यक्ति की अनुपस्थिति में व्यक्ति की आलोचना और निंदा हिंसा ही है। पहले हिंसा करनेवाले ईमानदार थे! सामने आते थे। अब पीछे से घाव लगाते हैं! भागवतकार कहते हैं कि धर्म का जन्म ईश्वर की छाती में से हुआ है। अधर्म का जन्म पीठ से हुआ है। में आप से बिनती करता हूं। गांव में ये नहीं कहते कि वो भाई पीछे पड़ गया है! तुमको ऐसा लगे कि कोई पीछे पड़ गया है तो खुश होना। ये गुजराती शब्द बहुत सीख देता है। वो भाई पीछे पड़ गया का अर्थ है कि एक तो वह पीछे है, दूसरा पीछे खड़ा है। कितना बड़ा बल मिलता है साहब! ये अहिंसा है। कारण बिना क्रोध करे ये हिंसा है। बहुत से लोगों का स्वभाव क्रोधी होता है। कोई कारण नहीं होता तो भी खड़ा करता है। तुम्हारा इष्टदेव कोई भी हो पर जगदंबा की आलोचना नहीं करना। ये परम्बा है, तुम्हारा इष्टदेव भी कोई जगदंबा की कोख से जन्मा है। धरती पर आने के लिए किसी की कोख का सहारा लेना ही पड़ता है। बाप बाद में आता है, पहले तो माता ही आती है। 'मातृ देवो भव।' जनक; बाप का विरोध करना ये हिंसा करना है।

मेरा मनोरथ था कि राष्ट्रपति भवन जो गौशाला रखता होता तो हम गीर की गाय भेजतें। महामहिम उदार, उन्होंने मेरी बात स्वीकारी और मेरी ऋषिकेश की कथा पूरी हुई तो व्यासपीठ पर पता चला कि राष्ट्रपति भवन में गाय प्रवेश कर चुकी हैं। मैं साधु के रूप में खुश हुआ। लेकिन टीका शुरू हो गई कि राष्ट्रपति भवन में तो गाय पहले से थी, बापू ने क्या नया काम किया? देखो तो सही, वहां कितनी गाय है! मैने कहा। मैं डाकोर में कथा कर रहा था। वहां कबीरपंथी बाबा, कथाप्रेमी था। पर अब ऐसे साधु नहीं मिलते। जैसे ही मेरी गाडी निकले वो मेरे सामने देखता। मुझे लगता मेरे शब्द इसे पीड़ा देते हैं! 'कबीरा' 'कबीरा' मैं बोल देता हूं, ये स्वाभाविक है कि उसको नहीं अच्छा लगता क्योंकि खुद के ईष्टदेव के प्रति श्रद्धा। दो-तीन दिन हुए। कथा जैसे ही पूरी होती वो मेरे दरवाजे पर आ जाता। फिर मैंने कहा कि कुछ चिंता है? साधु हो तो साधु से डरना नहीं। और मैंने कहा, महात्मा, आप को मेरे वचनों के द्वारा ठेस पहुंची हो तो क्षमा करो भगवन्! तो वह बोला, आप कबीरसाहब को 'कबीरसाहब' बोले। 'साहेबबंदगी' बोले! 'कबीरा' कबीरा' वो संसारी बोलते हैं! तब मुझे लगा कि मैं कैसे किसी को दु:खी कर सकता हूं? मैं इस जगत में किसी को दु:खी करने के लिए थोड़े आया हूं? पूरी दुनिया जानती है कि मेरी कथा में कबीर तो आते ही है। हम अमरिका में एक जगह कथा कर रहे थे। एक धर्मगुरु आये और कहलाया कि बापू की कथा में हम बैठेंगे, लेकिन बापू को कहना, हम बैठे तब तक कबीर का नाम न ले। ऐसा प्रतिबंध मैं नहीं स्वीकार करूंगा। और बाद में पता चला कि जिसे कबीर के साथ अच्छा नहीं लगता उसे किसी के साथ अच्छा नहीं लग सकता! कुछ साधु देश में ऐसे हुए हैं जिनके साथ सबको अच्छा लगता ही है। ये पद गाता हूं। मैंने गाया-

साधो, सो गुरु सत्य कहावे।
कोई नैनन में अलख लखावे।
भीतर-बाहर एक ही देखे, दूजा दृष्टि न आवे।
कह कबीर कोई सद्गुरु ऐसा आवागमन छुड़ावे।
साधो, सो गुरु सत्य कहावे।

कायाकष्ट कोई दिन नहीं दे ऐसे गुरु मुझे अच्छे लगते हैं। पूरा गाया। स्वाभाविक है। उदार दिल इसलिए सुना। मैंने उस महात्मा से कहा, तुमको कुछ कष्ट हुआ हो तो मैं

माफ़ी मांगता हूं। दूसरे दिन से ध्यान रखा, जहां 'कबीर' आये वहां बोलने में हिचकता और तुरंत 'कबीरसाहब' कह देता। उस दिन के बाद से ध्यान रखकर कबीरसाहब ही बोलना पड़ा। घटना घटी। आठवां दिन था। फिर से वो महात्मा मेरे दरवाजे के पास खड़े थे। मुझे लगा कि अब क्या गलती हुई? आंख में आंसू! मुझे कहे, 'बापू, एक मिनट, मैं तीन दिन से कथा सुन रहा हूं पर मजा नहीं आ रहा! आप को जैसे कबीर के लिए बोलता हो बोलना, इसमें सुधारा मत करो।' इसका नाम साधुता। गुरु का विरोधी हिंसा करता है। जिसकी हिंसा करने की प्रवृत्ति होगी, गुरु की भी करेगा। खुद के भाई का भी विरोध करेगा। पर अपनी छोटी-सी दुनिया है। माँ है, पिता है, अपनी आस्था का स्थान है। इसके साथ तो विरोध नहीं करना है। ये सब हिंसा है। स्वामी सच्चिदानंदजी कहते हैं, घृणित जीवन विरासत में मिलता है, ऐसे कुल में जन्म हुआ इसलिए जन्मे तब से ही हल्के! अब ये बदलना चाहिए।

तीसरा, वैधव्य जिन्हें आया हो ऐसी माताओं का कोई शुकन नही लेता! समाज में इन सब वस्तुओं पर मैं लगातार बोलता हूं। मैंने यहां तो कहा है कि ये सब बंद करो। अगर तुम्हें मकान बनवाना है तो बेटी के हाथ या फिर घर मैं बेठी विधवा माँ के हाथों मुहूर्त कराओ। मंगलकार्य उनके हाथों से ही कराओ। समाज को समझना पड़ेगा। एक और गंगास्वरूप कहते हैं, दूसरी और घृणित समझते हैं! रावण के दश मुख थे। सभी अच्छे थे। मैं 'रामायण' के गायक के रूप में जवाबदारी से कहता हूं। पर हमारे अंदर कितने हैं ये किसी को पता नहीं! कितने मुंह अंदर पड़ें हैं! ये अंदर के रावण को कैसे मारेगे? उस रावण को तो राम मार गये। मुझे लगता है, अंदर जो मुंह उग आए हैं उन्हें तो रामकथा ही मार सकती है, क्योंकी रामकथा कालिका है, चामुंडा है।

मुझे और आपको आकाशवाणी रोज सुनाई देती है। परंतु कभी उस वाणी में काम की वाणी सुनाई देती है तो कभी राम की। मुझे तुम्हारें साथ बात करनी है। अभी चार दिन है। 'वाणीरूपेण संस्थिता'; भगवती के कितने रूप है? और 'रामायण' में कितने ही वाणी के प्रकार लिखे है। ये कहना है कि ये साक्षात् कालि है। 'रामायण' तो कालि ही है। मेरे लिए तो यही कालि और यही कल्याणी। बाप! हिंसा के अनेक सूक्ष्म रूप है। बहुत समय हमारे पास आचरित हिंसा होती है। हम हमारी शरीर का उपयोग करे ये भी हिंसा ही करते हैं। जिसे आचरित हिंसा शास्त्रकार कहते हैं। और दुनिया को दिखता है कि उसे उसने मार दिया, उसने प्रहार किया, उसने धक्का दिया, परछाई आदि दिखती है अथवा अपमान किया, तिरस्कार किया, गोली मारी, गाली दी। आचरित हिंसा मनुष्य खुद ही करता है। बहुत से व्यक्ति खुद की हिंसा दिखे ऐसा नहीं करते पर उच्चारित हिंसा करते हैं। किसी को धक्का नहीं मारते पर दुश्मनी ऐसी निकालता है कि धक्का मार दे! नाज़िर देखैया की गझल है। भावनगर का कवि।

एवां न वेण काढो के कोईना दिलने ठेस वागे।
वाणी उपर बधो छे आधार मानवीनो।

उच्चारित हिंसा। द्वेषबुद्धि से आप किसी के लिए बोले ये हिंसा है। द्वेषबुद्धि कहीं न हो पर जागृति के लिए बोलो तो बात अलग। निंदा करना साधु के लक्षण नहीं पर निदान करना ये साधु का लक्षण जरूर है। डोक्टर निंदा नहीं, निदान करता है। मरीज़ आता है उसने जो किया वह किया, अब उसका इलाज कैसे करना है ये सोचता है। मनुष्य द्वेषपूर्वक चित्त से वाणी के बाण मारके उच्चारित हिंसा करते हैं। बहुत-से लोग बहुत होंशियार होते हैं जो आचरित हिंसा नहीं करते, उच्चारित भी नहीं लेकिन विचारों में हिंसा करते हैं! ये जो दुर्गा है उसे अहिंसा रूप में हम जाग्रत करें।

माँ चामुंडा को केन्द्र में रखकर हम सब स्तुति कर रहे हैं तब रामकथा स्वयं दुर्गा है। भगवान रामजन्म का उत्सव हम सब ने उत्साहपूर्वक मनाया। महाराज की अन्य दो रानीयों ने भी पुत्रों को जन्म दिया। चार पुत्रों की प्राप्ति के बाद अयोध्या में आनंद बढ़ गया। 'मानस' तो ऐसा लिखता है, जिस दिन रामजन्म हुआ उस दिन बारह बजे का सूरज था। ये एक महिने तक मध्याह्न का सूरज रहा! मानो एक महिने का दिन हो गया हो! बुद्धि से विचारे तो ऐसे पकड़ में न आये। एक महिने तक दिन डूबे ही नहीं ऐसा कभी हो नहीं सकता। परंतु संतों के पास से सुने हुए अनेक अर्थ है। इसमें नजदीक आये ऐसा अर्थ है कि जिसके जीवन में राम प्रगट होते हैं फिर रात होती ही नहीं है, दिन ही होता है। फिर उजाला ही होता है। हमारे जीवन में भी किसी भी तिथि को हरि प्रगट हो सकते हैं। इसके लिए किसी एक तिथि का इन्तजार नहीं करना होता है। महिने की किसी भी तिथि में हमारे हृदय की अयोध्या में प्रसन्नतारूपी, आरामरूपी, आनंदरूपी राम प्रगट हो सकते हैं।

चारों भाईयों का नामसंस्कार हुआ। वशिष्ठजी ने नामकरण किया। श्यामवर्ण है। सुख की खान है। जिसके नाम से जगत को आराम मिला है और मिलता रहेगा ऐसा तत्त्व कौशल्या के अंक में खेलता है, इसका नाम मैं राम रखता हूं। भरत का नामसंस्कार करते वशिष्ठजी ने कहा, राम जैसा वर्ण, शील, स्वभाव ये कैकेयी का बालक, ये सबको प्रेम और त्याग से भर देगा इसलिए इसका नाम भरत रहेगा। मनुष्य प्रेम और त्याग से भरता है, और जिसने सच्चा त्याग किया हो वो मनुष्य अंदर से भरपूर होता है। विश्व का भरण-पोषण जिसके हाथ से होगा वह भरत। जिनके नाम से शत्रुता का नाश होगा, दुश्मनी मिटेगी, ऐसे बालक का नाम शत्रुघ्न होगा। और बाद में कहा कि जो सभी लक्षणों का ठिकाना है। राम को अत्यंत प्रिय रहेगा, जगत का शेष नारायण के रूप में आधार है, परम उदारता जिसमें है, इस बालक का नाम लक्ष्मण रखता हूं। इसका ऐसा अर्थ समझना है, रामनाम जो जपता है उसे तीन लक्षणों का ध्यान रहे, दूसरे भाई का नाम भरत मतलब समाज में भरत की तरह सबका पोषण करे, रामनाम का आश्रय लेके समाज का शोषण नहीं करे। रामनाम जपनेवालें को किसी के साथ दुश्मनी नहीं रखनी। और रामनाम जपनेवाले में लक्षण होने चाहिए, हमसे बने जितना दूसरों के सहायक बने, आधार बने। चारों भाईयों के नामकरण के पीछे एक तात्त्विक विचार है। नामकरण संस्कार के बाद परमात्मा की लीला आगे बढ़ती है और इसमें बाद में विश्वामित्रजी आगे बढ़ते हैं। राम को लेके जाते हैं, ये कथा हम कल करेंगे।

हिंसा केवल शस्त्र से ही नहीं होती। शास्त्रों को जब कट्टरता की पोशाक पहनाई जाती है तब शास्त्र भी हिंसा करने में पीछे नहीं रहते। दुनिया में काफ़ी युद्ध धर्म के कारण हुए हैं। आंकडे बहुत बड़े हैं! बाप, सत्ताप्राप्ति के लिए हुए युद्धों की मात्रा धर्म के नाम पर हुए युद्धों से कम है। सामाजिक मूल्यों का परिवर्तन करने के लिए हुए युद्धों की संख्या बहुत कम है। ये मेरा सर्वे नहीं, यूनो का, विश्व संस्था का सर्वे है। धर्म के लिए बहुत युद्ध हुए! रुक जायें। इसलिए मेरी व्यासपीठ माँ को अहिंसारूपेण देखना चाहती है। माँ हमको ऐसी सद्बुद्धि दे कि हम माँ को अहिंसारूप में देखें। नये गीतों की रचना होनी चाहिए जिनके केन्द्र में अहिंसा हो।

कथा-दर्शन

- 'रामायण' वानरों की चांचल्यवृत्ति–आसुरीवृत्ति से मानव बनाने की फार्म्यूला है।
- रामकथा ये तो कुरबानी की कथा है।
- भक्ति के मार्ग पर चलें तब सहायक बल भी बहुत मिलते हैं और अवरोधक बल भी बहुत मिलते हैं।
- सत्य, प्रेम और करुणा यह एक आध्यात्मिक त्रिकोण है।
- बुद्धपुरुष वह है जो तुम्हें बंधन में न डाले बल्कि बुद्ध बनाये।
- साधु वर्तमान की पल को कभी अतीत न होने दे और अनागत भी न होने दे।
- साधु को साधन मत बनाओ। साधु समाज का साध्य है।
- साधु को जिस दिन साधन बनाया जाता है उस दिन संस्कृति आंसू बहाती है।
- गुरु के पास द्वार होता है, दीवारें होती ही नहीं।
- शस्त्र बहुत बड़ी शक्ति है वैसे शास्त्र भी बहुत बड़ी शक्ति है।
- वेदविद्या हमारे जीवन के रहस्य उद्घाटित करती है।
- भजन साधन नहीं है, भजन साध्य है।
- दुर्ग की सीमा सीमित होती है, दुर्गा की सीमा असीम होती है।
- इक्कीसवीं सदी में अहिंसारूपेण माँ की आवश्यकता है।
- इक्कीसवीं सदी गाने की सदी होनी चाहिए, संहार की नहीं।
- ईश्वर हमें अपनी निजता देता है, वह निजता बरकरार रखनी।
- परमात्मा पहले समाधान देता है, बाद में समस्या देता है।
- कबीर के साथ न बने उसको जगत में किसी के साथ न बने!
- हमारे भीतर का रावण मरना चाहिए।
- अंधेरे का अपना एक उजाला होता है।
- श्रद्धा जीवन है, अंधश्रद्धा मृत्यु है।

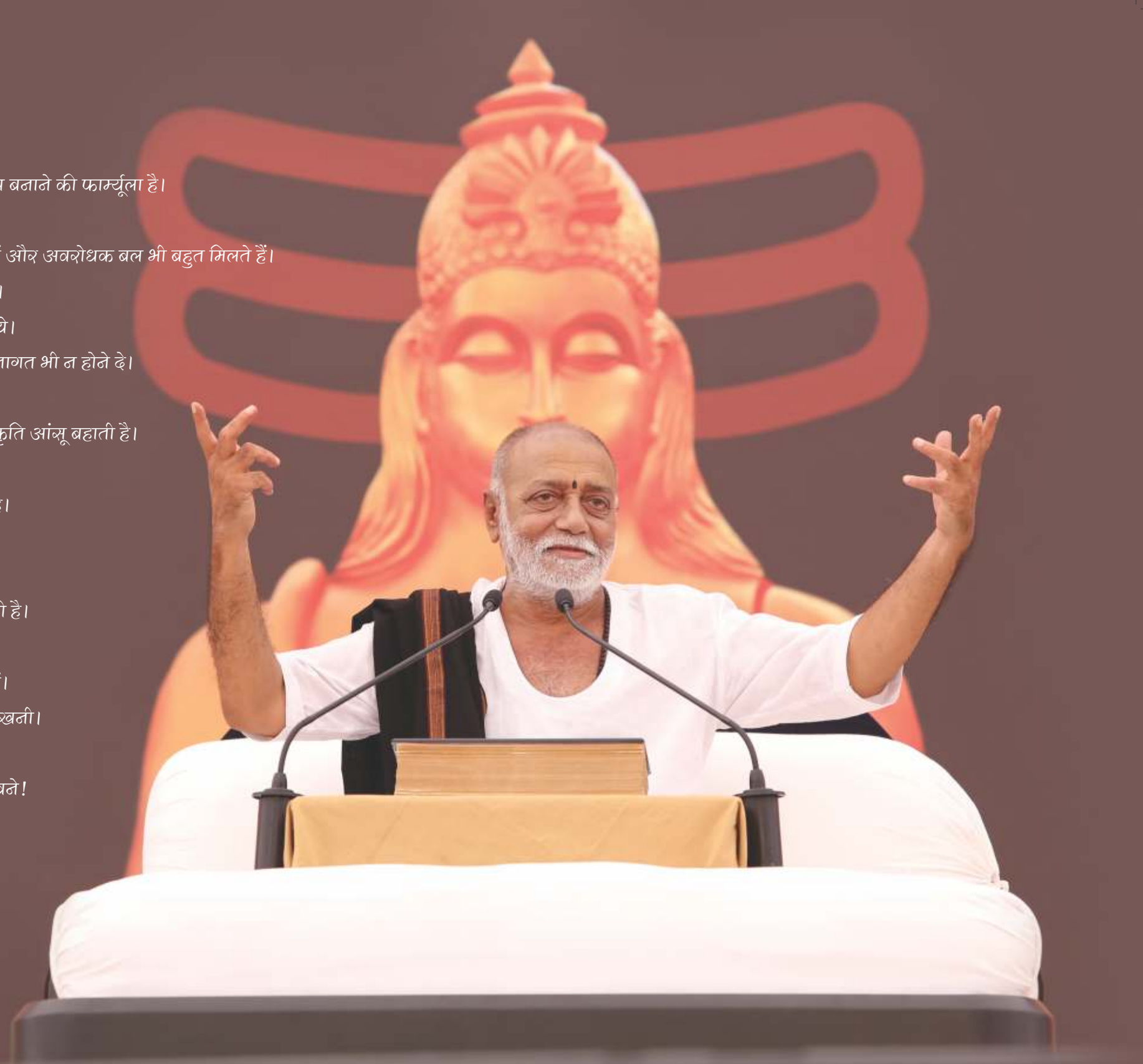

सत्य, प्रेम, करुणा का संदेश देना हो तो सब को एक होना पड़ेगा

आज माँ चामुंडा का आगे दर्शन करें इससे पूर्व आज दो कथाओं का सार लोकार्पित किया; कथा में व्यासपीठ पर से जो कहा गया हो उसे साररूप विवेकपूर्ण संपादित कर एक छोटी पुस्तिका वितरित करने का प्रसाद रूप में एक पवित्र उपक्रम शुरू हुआ है। कलकत्ता की कथा 'मानस-दसरथ' और बडौदा की कथा 'मानस-कर्णधार'; परम स्नेही नीतिनभाई और उनकी टीम स्वान्तः सुखाय से कर रहे हैं। प्रसाद के रूप में पुस्तिका आप तक पहुंचाने का प्रयत्न है। व्यासपीठ के प्रेमयज्ञ में ऐसी कितनी ही आहुति प्रदान होती है। सब के प्रति मैं खूब-खूब हृदय का भाव व्यक्त करता हूं। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। नीतिनभाई की कविता कहनी है जो कल मुझे दी थी। नीतिनभाई ने अपने भावानुसार लिखी है। अब मैं यह कविता 'रामायण' की ओर अथवा तो व्यासपीठ की ओर रखता हूं। मेरे लिए साधार है। शीर्षक है, 'वींधाउं छुं.'

रोज एने द्वार दोडी जाउं छुं।
तीर सामे जई अने वींधाउं छुं।

दूसरा दरवाजा नहीं देखा है। कहां जाऊं? आप कल्पना कीजिए। किसके पास जाऊं? मुझे रोज इस ('रामायण') के द्वार जाना पड़े। व्यासपीठ की शरण जाना पड़े। याद रखिए, मेरे भाईयों-बहनों, 'शरण' शब्द है। संस्कृत में 'अमरकोश'में उस स्वर का नाम है 'शरण गृह रक्षितो।' संस्कृत शब्दकोश में घर का नाम शरण है। क्योंकि कहां जाना? घूमकर घर ही जाना पड़े। एक रक्षक के लिए भी यह शब्द प्रयुक्त होता है। जो रक्षा करता है। हमारे पास उसकी संज्ञा शरण है। अपने यहां घर मालिक और रक्षक दूसरा होता है तब धपले होते हैं। घर का मालिक ही रक्षक हो तो 'शरण' शब्द ज्यादा सार्थक है। हम कहां जाय? माताजी के उपासक माताजी को छोड़कर कहां जाय? मीरां की पंक्ति याद आती है। 'मानस' के समर्थ गायक और व्याख्याकार दामोदर दत्त शास्त्री सुंदर शास्त्रीय संगीत में, भैरवी में प्रस्तुत करते थे-

तोरी प्रीत तोड़ी कृष्ण कौन संग जोड़ी।

हे गोविंद, तू प्रीत तोड़ दे। तू समर्थ है। तुझे कौन कहे? पर हम आपसे प्रीत तोड़े तो कहीं के न रहे! भगतबापू कहते हैं बाप, हम कहां जाय?

ठाकर अमने मेलमां ठेली
तुं तो छे ऐकलनो बेली।

कवि क्या कहता है? हम आपके अंग हैं। तुम सुंदर लगते हो और हम न हो तो तुम विकलांग हो जाओ। शिव को नर्तन करने की इच्छा हो तब वह जीव का वरण करते हैं। कृष्ण को रास की इच्छा हो तब कोई न कोई श्रुतिरूपा, ऋषिरूपा और गोपीरूप का वरण करते हैं।

अमे तारां अंग कहेवाइए।
जीवण कोने आशरे जाईए?

माँ को छोड़कर कहां जाय? बालक माँ को छोड़कर कहां जाय? स्त्री गर्भ धारण करती है अतः माँ है। क्या पुरुष गर्भ धारण करता है? वह हंमेशा गर्व धारण करता है। मातृत्व और पितृत्व का यही फ़र्क है। छोड़कर कहां जाय? तुलसी 'विनयपत्रिका' में लिखते हैं-

जो तुम त्यागो राघव हौं तो नहीं त्यागो।

हे राघव, तू मुझे छोड़ना चाहे छोड़ दे। तू समर्थ है। पर मैं नहीं छोडूंगा। हे राघव, तेरे चरण छोड़कर, शरण छोड़कर कैसे अन्य को प्रेम करूं? कहां जाय? यह भाव नीतिनभाई की प्रथम पंक्ति में है। शब्द उनके है, प्रस्तुति मेरी है। मैं यह 'रामायण' को छोड़कर कहां जाऊं? प्रत्येक कथा में एक चिठ्ठी तो आती ही है। यह मैं दिल से कहता हूं। पहले तो ऐसा होता था, मैं जहां कथा करने जाऊं, एक अफ़वा शुरू हो जाती थी! जैसी ब्रह्मलीन डोंगरेबापा को लेकर अफ़वा शुरू हुई थी कि यह उनकी आखिरी कथा है! ऐसी अफवाएं! अब वो बापा नहीं तो यह बापू मिला! मेरे लिए अफवा थी कि यह मेरी बडौदा की आखिरी कथा है! फिर बापू कथा नहीं करेंगे!' फिर कोई उत्साही पूछता है, आप कब तक कथा करनेवाले है? तुझे क्या आपत्ति है? तुम्हें क्यों जल्दबाजी है? मेरी कथा सुनने के लिए ईश्वर तुझे लंबी उम्र दे। मुझे तो शुभकामना ही देनी है ना? उपनिषद ने तो सौ साल की छूट दी है। आप सुनते रहेंगे तब तक गाता रहूंगा। जिस दिन हरि की इच्छा नहीं होगी तब बंद। बाकी शरण यह ('रामायण') है। इसके सिवा कहां जाये? हे अंबा, हे चामुंडा, ओर कहां जाऊं? केवल तेरा शरण है। मुझे पता है, यह बींध डालेंगे। यह आरपार उतार देंगे। तो भी जाता हूं सामने से बींधवाने के लिए। क्योंकि गुरु का बोल मुझे मार डालेगा। 'रामचरित मानस' की चौपाई आरपार कर देगी। वेद में गुरु को मृत्यु कहा है। गुरु मृत्यु है। पता है ये चौपाईयां मार डालेगी। चेन नहीं लेने देती। सोने नहीं देती। ज्यों-ज्यों दिन जाते हैं वैसे खुराक कम हो उतने भर जाते हैं। रोज हम स्तोत्र के पास जाते हैं। पता है ये सब हमें मार डालेंगे। साहब, एक दोहा खत्म कर देता है! एक छंद मार डालता है! कविता मार देती है। तो भी तीर के सामने बींधने जाते हैं। 'लाग्यां शब्दनां बाण।' खबर है फिर भी बींधाने जाते हैं। अभी शब्द का प्रहार होगा। आरपार उतार देगा। चैन नहीं रहेगा।

प्रश्न ए हुं खुद मने पूछ्या करुं,
ए दिशामां कां सतत खेंचाउं छुं?

यह प्रश्न मैं स्वयं को पूछता रहता हूं। उस दिशा में क्यों खींचा जाता हूं? बीस मिनट लगते हैं, सब छकड़े में आते हैं कथा मंडप तक। ठिकाना यही है। ये सब क्यों खींचे चले आते हैं? कवि खुद को पूछता है उस दिशा की ओर क्यों जाते हैं? 'रामायण' मुझे क्यों खींचती है? मुझे क्यों बुद्धपुरुष खींचते है? यह प्रश्न है।

नाम एना होठ पर आव्या पछी,
हुंय केवो पांचमां पुछाउं छुं?

हरि का नाम ले तो हमें पांच लोग पूछते हैं। सुंदर कविता गायन करता है। लोग हमें पूछे। यदि मेरे पास 'रामचरित मानस' न होता और मैं चोटीला आता तो इतनी संख्या में लोग मेरे पास न आये होते। समझ लीजिए, मोरारिबापू महत्त्व के नहीं है। महत्त्व 'मानस' का है। उसे लेकर ही हमें पांच लोग पूछते हैं। लोग पूजते हैं तब हंमेशा ध्यान रहे, कहीं चूक न हो जाय!

ज्योत समजणनी जलावी एमणे,
हुं मने पण एटले समजाउं छुं।

'रामायण' के 'उत्तरकांड' में ज्ञानदीप की ज्योति प्रगट है। 'दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा।' 'रामायण' ने हमें समझदारी की ज्योत दी। यदि यह न मिलती तो आदमी आदमी को पहचान न पाता। 'कोऽहम्? कोऽहम्?' का जवाब 'मानस' में है 'सोहम्।' 'सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा।' ये सभी 'मानस' के प्रमाण है। नीतिनभाई की रचना मैं अपने पर लूं तो खरी उतरती है। मैं इसके सिवा किसकी शरण में जाऊं? शरण ईश्वर का नाम है। 'भगवद्गीता' में भगवान के बारह नाम लिखे हैं उसमें एक नाम शरण है। यह भी एक अर्थघटन हो। रोज नये होने चाहिए।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

मुझे पता था कल मैंने जब कहा था तब कि यह बात आयेगी ही। वह आई! मैंने कहा था कि देवी के इस स्तोत्र में शक्तिरूपेण, दयारूपेण, क्षमारूपेण है। 'अहिंसारूपेण' नहीं है। यह बावा कहां से लाया? साधु के आशीर्वाद से और मेरे श्रोताओं की मीठी नजर हो। इस देश और विश्व को अहिंसारूपेण देवी चाहिए। कल हमने विस्तार से ये बातें बताई है। जरूरत हुई तब चंडमुंड को और आदि-आदि किया। हे माँ, बिना हिंसा रक्त निकाल सको तो निकालो। इस तरह रक्त निकाल कि हम विरक्त हो जाय। बैराग ले ले। ऐसी है अहिंसारूपा संस्थिता। मुझे पूछा गया कि यह किस स्तोत्र में लिखा है? तलगाजरडा का स्तोत्र है। मैं तलगाजरडुं लाया करता हूं उसे आप अन्यथा न ले। मुझे अपनी जिम्मेदारी लेनी है इसलिए नाम लेता हूं। आप केवल सुने। यह बावा बारह साल बाद बोला ऐसा नहीं पर यह बावा हर बार मिनट पर बोलता है। मेरी आंखें ऐसी भगवती को देखना चाहती है जो अहिंसारूपा संस्थिता है। माताजी के, नौ दुर्गा के एक-एक स्वरूप यहां बदलता रहता है, यह चामुंडा का रूप है। कल महालक्ष्मी थी, आज महाकालि है। यह देवी रोज नई-नई लगती है तो उसका दर्शन भी नए-नए होने चाहिए। इसमें देवी नाराज नहीं होती। अहिंसा स्थापित होनी चाहिए। हम अपना भाव रखकर आगे बढ़ें।

या देवी सर्वभूतेषु वाणीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

'वाणीरूपेण संस्थिता'; चामुंडा माँ, दुर्गा, तेरा एक ही रूप है वाणीरूप। 'रामचरित मानस' का आधार लूं। 'रामायण' में चालीस-पैंतालीस प्रकार की वाणी बताई है। कल एडिट करके बता दूंगा। पर हम आदि सद्ग्रंथों को पूछे, आपकी वाणी के कितने प्रकार है? हमारा आखिरी ठिकाना वेद है। उसमें लिखा है, वाणी सात प्रकार की होती है। ऋग्वेद में छोटा-सा वेदमंत्र विचार है। पहले मैं बोलूं, फिर आप बोलिए। ध्यान से सुनिये। गांव के लोग शुद्धरूप में बोल पायेंगे।

एकं गर्भं दधिरे सप्त वाणीः।

भगवान वेद कहते हैं, एक ही गर्म में सात वाणी निवास करती है। किसीने वेदऋषि से पूछा, आप कहते हैं, सात वाणी एक गर्भ में निवास करती है, उसमें क्या निकलता है? विनोबाजी इसका क्या अर्थ करते हैं? महामुनि विनोबाजी अर्थ करते हैं कि सात वाणी माने सा रे ग म प ध नि। यह सप्तवाणी है। यह प्रत्येक घर में होती है। गायनरूप या प्रवाहरूप में प्रगट होती है। अधिकारी महापुरुष विनोबाजी वेद पर बोल सकते हैं। सात सूर वेद की सप्तवाणी है। उसीसे गीत प्रगट होता है। राग प्रगट होता है। सप्तवाणी अलग है। पर हार्मनी है। सब में एक संगति है। अतः एक राग प्रस्तुत होता है। विनोबाजी अपनी शैली में बात करते हैं। उनका दर्शन है कि हिन्दु, मुस्लिम, इसाई, जैन, बौद्ध, शीख और सनातन ये सात

वाणी एकत्र हो जाय तो एक गर्भ में से एकता-हार्मनी-समन्वय प्रगट हो जाय। सभी की उपासना अलग है। सबको आदर देना चाहिए। तो बड़ा काम होता है। सब एकत्र हो तो संगीत उत्पन्न होता है। भारतीय स्वातंत्र्य दिन पर गायक भीमसेन जोशी के कंठ में गाया गया, 'मिले सूर मेरा तुम्हारा तो सूर बने हमारा।' इस देश को जरूर है ऐसे सूर की।

मैं आपको बिनती करता हूं। सभी श्रोता, व्यासपीठ, धर्मस्थान सबको कैसे साथ रखे? यह साहित्य का कर्तव्य है। गीत और मंत्र का कर्तव्य है। सप्तवाणी एक गर्भ में गायन उत्पन्न करे। संगीतज्ञों का मानना है कि परमात्मा के अवतार के अस्तित्व की जितनी आवाज़ें है ये सभी राग है। नानक, कबीर, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, मीरां, नरसिंह महेता, गंगासती ने हार्मनी के लिए काम किया था। आपके आशीर्वाद से तलगाजरडा ने किया है। मेरी सभी जवान चेतनाएं जानती है मुझे क्या करना है। जिसके हृदय में हिन्दुस्तान और समस्त वसुधा की भलाई होगी, उन्हें ऐसे कदम उठाने पड़ेंगे। अकेली बहन यदि कमरे में झिंझिया ले तो घरवालों को ऐसा लगे कि गाया। पर छोटे-से आंगन में सब इकठ्ठे होकर झिंझिया ले और वेद भी कहे, 'संगच्छध्वम्।' एक साथ चलिए, बोलिए। यह कोरस कहां से आया? वेद का संदेश है, साथ में चलिए। गलतफहमी करनेवालों को मुबारक। बाकी मेरे पास आनेवाले कोई भी होंगे, स्नेह-आदर दोनों ले गए हैं। एक बार तलगाजरडा आईए। चाहे राग-द्वेष हो; गलत अर्थघटन करनेवालों को माँ चामुंडा आपको दीघार्यु करे। प्रत्येक क्षेत्र, धर्म-आध्यात्मिक, राजकीय, सामाजिक, पारिवारिक, शिक्षण, साहित्य इन सभी ने अपनी जड़ता-आग्रहों को दूर रखकर राष्ट्र ने जगत को सत्य दिया, जिस राष्ट्र ने परस्पर प्रेम का बोध दिया और जिस राष्ट्र ने सार्वभौम करुणा बहाई ऐसा सत्य, प्रेम, करुणा का संदेश देने के लिए एक होना पड़ेगा। सप्तवाणी एक गर्भ में से गायनरूप में प्रगट होती है।

'फूलछाब' दैनिक में 'खबर की खबर' कोलम लेखक तंत्री कौशिकभाई ने हेडिंग लिखा है, 'मोरारिबापू उनके लिए कथा करे?' ब्यौरा दिया है कि मोरारिबापू ने विहार करती जाति, देवीपूजकों के लिए कथा थी। इस्लाम धर्म के सभी भाई इकठ्ठे होते हैं तो मेरी तैयारी है। राजकोट में मेरा जाहिरनामा था। विहरती जाति, देवीपूजक, वाल्मीकि समाज, अठारह वर्ण की कथा की। केन्या में थे तब कौशिकभाई और 'चित्रलेखा' के प्रतिनिधि साथ में थे उन्होंने पूछा, 'बापू, अब किसकी कथा बाकी है?' मैंने कहा, यह बात मेरे मन में थी, अब मेरे समाज में से किन्नरों की कथा मुझे करनी है। थाने में रहती लक्ष्मी एक-दो दिन में आनेवाली है। यूनो तक किन्नरों के हक के लिए लड़ती है। कितनी भाषा जानती है! उन्होंने यह संदेश सुना। तलगाजरडा आई, कहा, बापू, आप हमारे लिए कथा करेंगे? मैंने कहा, यजमान को भी मैं ढूंढ दूंगा।'

कौशिकभाई ने ऐसा विचार किया कि बापू, इनके लिए कथा करे? माने राजनीति में रहे हुए वरिष्ठजनों के लिए। मेरी तैयारी है। 'मानस-राजधर्म' करूंगा। राजनीति-समाज के वरिष्ठजन हमारे पास आए; मैं कथा दूं। पर साथ साथ एक प्रश्न रखूं; प्रश्न नहीं, जिज्ञासा। क्या प्रधानमंत्री सुनने आयेंगे? स्वागत है। सी.एम. थे तब आते थे। सभी पक्ष के वरिष्ठजन आयेंगे? राष्ट्रीय, प्रांतीयस्तर पर? सभी सी.एम.साहब आयेंगे? सभी आदरणीय विधानसभा के सदस्य, लोकसभा-राज्यसभा के मेम्बर्स आयेंगे? तलगाजरडा का सविनय निवेदन है कि दीपप्रागट्य के लिए आदरणीय सार्वभौम

भारत के महामहिम प्रणवदा आयेंगे? प्रामाणिक डिस्टन्स रखकर मुझे बहुत कुछ कहना है। ये सब हमारे अत्यंत व्यस्त वरिष्ठजन है। अपनी दक्षता अनुसार आयोजित नेटवर्क में वे व्यस्त रहते हैं! जैसे मैं व्यस्त नहीं, यार? जैसे ही पूर्णाहूति होगी तो कहीं न कही कार्यक्रम होते हैं। कहीं दीप प्रागट्य होगा! कहीं खड्डा खोदना होगा! कहीं रिबन काटनी होगी! हम कहां बिना कामके हैं?

सब मिले तो मेरी कथा की तैयारी है। आई एम ओलवेयझ रेडी। आधी रात को कहे तो आधी रात को भी। सब मेरे पास आईए। मुझे तो क्या अपना, क्या पराया? नहीं तो साधुता को कलंक लगे। आप न समझे तो जिम्मेदारी आपकी। इसमें मेरी जिम्मेदारी कहां? मैं क्या करूं? शायद समय न हो, कोई भी कारण हो; कथा सुनने शायद न आए पर मुझे जो कहना है वह तो कहूंगा ही। सद्भाव से कहूंगा। आज नहीं तो कल अस्तित्व मेरा रेकर्डिंग बजायेगा। लोंग प्ले मेरा हरि बजायेगा उस दिन पीढ़ियां सुनेगी। संक्षेप में, मैं विचार का स्वागत करता हूं। कौन कहां-कहां है, इससे मेरी व्यासपीठ का क्या लेना-देना? बहुत प्रामाणिक डिस्टन्स रखे।

तो, 'मिले सूर मेरा तुम्हारा, तो सूर बने हमारा।' परस्पर भूल निकाले बगैर एक वस्तु समझ ले पंचभौतिक शरीण धारण किया हो तो कुछ कमजोरियां आ ही जाती है। प्रमाण? भगवान विष्णु। ब्रह्मरूप में हो तो बात अलग है। पर जब पंचभौतिक शरीर धारण करते हैं, विग्रह धारण करे तब उसमें भी पुराणकारों ने दोष बताए हैं। सती वृंदा के छल करने पर जल गई। उसकी राख में विष्णु लेटते हैं। पंचभौतिक शरीर में दोष होते ही है। हम वंदन करते हैं पितामह ब्रह्मा को। उनमें भी कमजोरी है। इसी वजह पांचवां मस्तक काट दिया गया। नहीं तो ब्रह्मा पंचमुखी थे। अब ब्रह्मा चतुर्मुखी है। यद्यपि भगवान शंकर निराकार है। वह तो शून्य है। परंतु जब लीलाओं में हम उनकी लीला गाते हैं, विग्रहधारी है; उनकी मूर्ति भी स्थापित करते हैं नटराज के रूप में। शिव भी सती के दग्ध शरीर को अपने कंधे पर लेकर बीभत्स रस में लोटपोट होकर घूमते रहते हैं। सयाना यो न करें। कमजोरी है। ब्रह्मा-विष्णु-महेश में कमजोरियां हो तो हम तो जंतु है। किसी भी क्षेत्र के हो, कमजोरी तो रहेगी ही। इस सबका स्वीकार कर आदर-सद्भाव सह बिनसांप्रदायिकता का नकाब फेंककर और सांप्रदायिकता का स्वार्थी नकाब फेंक देना चाहिए। दोनों कहूं क्योंकि स्वार्थ के लिए अपना हेतु साधने कईयों ने दंभी सांप्रदायिकता के नकाब पहन रखे हैं। पर ये सब भूल कर एक होकर कथा करनी हो तो मेरी तैयारी है। मेरे लिए सभी श्रोता ममता के केन्द्र में है। आपका क्या विचार है? मुझे आपत्ति नहीं है-

क्यां रे जवुं'तुं ने क्यां जई चड्या?
अमे भवना मुसाफर भूला रे पड्या...

हमें कहां जाना था और कहां पहुंच गए बाप! 'दधिरे सप्त वाणी:।' वेदों के आचार्य कहते हैं, ये तो पांच-सात बोली जाती है बाकी परा, पश्यंति, मध्यमा और वैखरी चार वाणी है। महामुनि विनोबाजी का भाव, आचार्यों का भाव, वेदमंत्रपरक सप्त वाणी कौन-सी है? विनोबाजी सा रे ग म प ध नि कहते हैं। मुझे अर्थघटन करना है। आप अनुकूलता अनुसार स्वीकार कीजिए। 'सा' माने समतापूर्ण वाणी। चाहे कोई भी गायक चाहे जिस सूर में गाता हो। धूमधाम कर सा पर आ जायगा। सम पर आ जाता है। 'सा' माने सम वाणी। इसमें अपने-पराये का भेद नहीं होता। सा की वाणी। संगीत शास्त्र हमें सम पर ला देता है। 'रे' माने रहमतपूर्ण वाणी। जिसकी वाणी में रहमत हो, उपकारकता हो, करम हो,

आशीर्वाद हो। नूरानी बानी। 'नूरानी' शब्द सूफीवाद में अच्छा लगता है। एक फिल्मी गीत है-

हसता हुआ नूरानी चेहरा,
काली झुल्फें रंग सुनहरा...

मैं यह गाऊं तब मुझे सुवर्णमय हनुमान दिखाई देते हैं। तीसरा, 'ग' माने गंभीर-धीर गंभीर वाणी। मानो गगन गर्जन करता हो। 'म' माने मध्यमवर्गीय वाणी। न उग्र, न सौम्य; मध्यम। जिसे बुद्ध सम्यक् कहते हैं। न उग्रता, न कायरता। 'प' का अर्थ है परमवाणी। तमाम बंधनों से मुक्त भाषा कौन-सी है? उच्चार से, अर्थ के बंधनों से मुक्त ऐसी परमवाणी या पश्यंति लो, 'प' माने परमवाणी। 'ध' माने अपने-अपने धर्म की वाणी। हम हिन्दु है तो हमारी 'गीता' की वाणी। 'मानस' की वाणी। ईस्लाम की कुरान की वाणी। ईसाई हो तो बाईबल की वाणी। बौद्ध हो तो धम्मपद। जैन हो तो आगम। अपनी-अपनी धर्मवाणी। शीख हो तो गुरुग्रंथ साहब। 'नि' का अर्थ है निर्दंभ वाणी। ऐसा मेरी व्यासपीठ कहती है। जो अहंकारमुक्त निर्मान वाणी हो। यह सप्तवाणी है।

बाप! हम ऐसी वाणी का उच्चारण करे कि विषमता पैदा न हो, द्वैत पैदा न हो। हम दुर्गा को वाणीरूप में आत्मसात् करे कि वाणी में रहमत झरे। ऐसा भाव जगे। 'ग' माने गंभीर वाणी। मानो गगन गर्जन करता हो। बोले तो आंखें गंभीर लगती है। 'म' माने मध्यमवाणी। न उग्र, न सौम्य। 'प' माने परमवाणी। सब से मुक्त वाणी। 'ध' माने अपने-अपने धर्म की वाणी। सभी सादर बोले। 'नि' माने निर्मान, अभिमानमुक्त निर्दंभवाणी। इसका अर्थ है, मेरी जिम्मेदारी संवाद रूप में आपके सामने रखता हूं। आचार्य कहते हैं, पांच-सात तो केवल बात है। बाकी वाणी तो चार परा, पश्यंति, मध्यमा और वैखरी है। चार में तीन जोड़ दे तो सप्तवाणी हो जाय। पांचवीं वाणी वेद की है। वेद में शास्त्र-उपनिषद समाविष्ट कर दे तो छठ्ठी वाणी है। जन्म की वाणी। अपनी वाणी। हम गुजराती है तो गुजराती। अनेक स्तर पर गुजराती भाषा के लिए अभियान होते हैं। ध्यान रखिए, बच्चें गुजराती भूल न जाय, नहीं तो यह साहित्य जो नई चेतना प्रस्तुत करती है वह समझ में नहीं आयेगा। सातवीं लोकवाणी है शुद्धवाणी। नरसिंह महेता, गंगासती, आई सोनल की वाणी। लोकवाणी द्वारा बहुत बड़ा काम हो रहा है।

यह सप्तवाणी। अभी एक कृष्णशंकरदादा का दर्शन है। तपस्वी ऋषि कृष्णशंकरदादा ने कथाकारों के संमेलन में कहा, वाणी सत्यात्मक होनी चाहिए। अलंकार और कल्पना की छूट है। पर मूल में सत्य होना चाहिए। वाणी सूत्रात्मक होनी चाहिए। 'भगवद्गीता' ने भी दीर्घसूत्री की आलोचना की है। अपने यहां सूत्र काफी आए हैं। सांख्य, योग, ब्रह्म, भक्ति, धर्मसूत्र संस्कृत में आए। दादाजी कहते थे, वाणी स्वानुभवात्मक होनी चाहिए। अपने अनुभव से निकली हुई होनी चाहिए। चौथी बात दादाजी कहते थे कि वाणी स्नेहात्मक होनी चाहिए।

माँ जगदंबा चामुंडा वाणीरूपा है। उन्हें माँ स्वरूप सुने। जगदंबा प्रगट है ऐसे भाव से सुने। माँ शक्तिरूपा है, क्षमारूपा है। हम माँ के अलग-अलग रूप के दर्शन करते हैं। कथा के क्रम में दशरथ महाराज के चार पुत्रों का नामकरण संस्कार वशिष्ठजी ने किया। भगवान कुमारावस्था में आने लगे हैं। चारों का यज्ञोपवित संस्कार हुआ। चारों वशिष्ठजी के यहां विद्याभ्यास करने गए हैं। तुलसीदासजी लिखते हैं कि अल्पकाल में ही सारी विद्या प्राप्त कर ली है। यह तो ब्रह्म है। जिनके श्वास-श्वास में वेद है वे क्या अभ्यास करे? फिर भी गुरुपरंपरा के आदर्श को स्थापित करने राम

गुरुद्वार अभ्यास करने जाते हैं। उपनिषदीय विद्या आदि का स्वाध्याय ही नहीं करते पर जीवन में उतारते हैं।

विश्वामित्र नामक महामुनि महात्मा सिद्धाश्रम में जप-यज्ञ साधना करते हैं परंतु मारीच और सुबाहु नामक असुर विक्षेप करते हैं। अनुष्ठान पूरे नहीं होने देते। विश्वामित्रजी पदयात्रा करते अयोध्या आते हैं। विश्वामित्रजी ने बात रखी कि यज्ञ की कृपा से आपको पुत्र प्राप्ति हुई है। मेरे यज्ञ की रक्षा करने हेतु यज्ञ द्वारा प्राप्त चार पुत्रों में से दो पुत्र दे यह कर्तव्यवश है। ऋषि के आशीर्वाद से आपको चार पुत्र मिले हैं। तो ऋषि का कर्तव्य करने दो पुत्र देना आपका कर्तव्य है। मुझे राम-लक्ष्मण दीजिए। दशरथजी को बात पसंद नहीं आई। परंतु वशिष्ठजी बीच में आए। कहा, 'राजन्, आप राम को अपने आंगन में कब तक बांध रखेंगे? ये तो वैश्विक तत्त्व है। उन्हें आंगन से बाहर निकालिए।' गुरुवचन का स्वीकार कर दशरथ राम-लक्ष्मण दे देते हैं। माताओं के आशीर्वाद लेकर दोनों भाई पदयात्रा करते हैं। रास्ते में ताडका आती है। दुर्गुण की भूमिका का नाश किया है। एक दिन विश्वामित्र कहते हैं, 'मेरा यज्ञ पूरा हुआ, अब रास्ते में एक यज्ञ है।' 'किसका?' 'अहल्या का।' 'एक पत्थर शून्यवत् प्रतीक्षा-यज्ञ कर रहा है। आप वह भी पूरा करे फिर हम जनकपुर जाय। वहां धनुष्ययज्ञ है। वह भी पूरा करे।'

यह यज्ञयात्रा है। राम-लक्ष्मण विश्वामित्र आदि मुनि हर्षित होकर आगे बढते हैं। एक आश्रम आया। पशु-पक्षी, जीव-जंतु कोई नहीं है। सन्नाटा है! भगवान रुककर पूछते हैं, 'यह किसका आश्रम है?' 'गौतमऋषि का है।' शाप के आधीन तपस्विनी अहल्या है। इन्द्र अपना स्वार्थ पूरा कर भाग गया है। स्वयं गौतमऋषि भी चले गए हैं। शायद उन्होंने तय किया कि चंचलता को स्थिर कर दूं। अहल्या पथ्थर या शिला नहीं, शिलावत् है। आज भी समाज में ऐसे कितने पात्र शिलावत् नहीं पर शिलावत् जी रहे हैं। कोई बुलाता नहीं! स्वीकार नहीं करता! रामकथा सुनते हैं तो आखिरी आदमी तक पहुंचना। मंडप में बैठे संकल्प करे कि कोई तिरस्कृत नहीं रहेगा। रामजी ने स्वीकार किया। अहल्या का उद्धार हुआ। बड़ी चीज है। पाप कौन नहीं करता? अहल्या जितना धैर्य होगा तो मंदिर नहीं जाना पड़ेगा। मंदिर स्थित राम नंगे पैर आयेगा। विश्वामित्र ने पक्ष लिया है। अहल्या पुनः स्थापित हुई। भगवान पतित पावन बने। गंगा तट आए। स्नान कर जनकपुर पहुंचे। स्वागत हेतु जनकजी आए। विदेहराज राम के देह-सौंदर्य को देख मुग्ध हुए। 'यह कौन है?' विश्वामित्र ने कहा, यह प्रियतत्त्व है। दशरथपुत्र है। निवास दिया। सब ने भोजन किया। मैं भी भोजन के लिए आपको मुक्त करता हूं। विश्राम भाग्य में हो तो कीजिए!

व्यासपीठ-धर्मस्थान हम सब का एक ही काम है, कैसे सब को साथ रखे? साहित्य का यह कर्तव्य है। गीत और मंत्र का यही कर्तव्य होना चाहिए कि सप्तवाणी एक गर्भ में गायन पैदा करे। संगीतज्ञ का मानना है कि परमात्मा के अस्तित्व के अवतारूप में जितनी आवाज़ें हैं ये सभी राग है। नानक, कबीर, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, मीरां, नरसिंह महेता, गंगासती ने हार्मनी के लिए काम किया। आपके आशीर्वाद से तलगाजरडा ने भी किया है। हिन्दुस्तान और वसुधा की भलाई जिनके हृदय में होगी उन्हें ऐसे कदम उठाने पड़ेंगे।

बलि के नाम पर हिंसात्मक वृत्ति भी निकल जानी चाहिए

'मानस-चामुंडा'; आज प्रश्न और जिज्ञासाएं हैं। एक तो 'अहिंसारूपेण संस्थिता' जो कहा गया उसके बारे में लोकसमाज, विद्वत् समाज में से जिज्ञासाएं आती रहती है। एक जिज्ञासा, 'बापू, विश्व में अहिंसा की स्थापना किसने की है?' उन्होंने पर्टिक्युलर बुद्ध का नाम लिया है। यह सच है। 'रामचरित मानस' में लिखा है-

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।
पर निंदा सम अघ न गरीसा।।

अहिंसा यह श्रुति विदित है। परम धर्म है। वेदकाल से अहिंसा धर्म का स्वीकार होता आया है। यद्यपि तथाकथित कर्मकांडों ने उस काल में भी यज्ञ के नाम पर, बलि के नाम पर हिंसा की है या अनुमोदित हिंसा की है। अपने यहां नरमेध यज्ञ तक की बातें आई है। अश्वमेध की बातें भी आई है। आज की सदी में तो मैं प्रार्थना करता हूं, ब्राह्मण समाज को भी, जिन के हाथ में यज्ञादि कर्मकांड है। पशु तो नहीं काटतें हैं। कहीं पर हो तो बंद होने चाहिए। कल मैं एक नेह में बाजरे की रोटी खाने गया। माताजी का मढ है। वहां एक रबारी भुवा मिला। 'ये ज्वार के दानें है ना?' मैंने पूछा। 'हां, न मिले तो फिर गेहूं के दानों से काम चला लो। सूजी का नहीं तो गेहूं का शीरा होता है सत्यनारायण की कथा में। हम कभी भी माता के मढ में बलि नहीं चढ़ाते। भेड-बकरियों को पालते हैं, काटते नहीं।' पैर छूने की इच्छा होती है। कुछ देवी के स्थानों में भयानक हिंसा आज भी होती है। पशुबलि के कारण हमें लगता है ये मंदिर है या कसाईखाना? ये लड़कें देखकर आए हैं। मैंने भी एक बार देखा। मैं तो दरवाजे से ही लौट जाता हूं। मैं देख नहीं सकता। कलकत्ता में कालि के मंदिर गया पर वह स्थान देखूं तो लौट जाऊं। अब नहीं काटते। पर अभी भी काटने की जगह मौजूद है।

साधु के रूप में प्रार्थना करूं कि यह बंद कीजिए। यह आदेश नहीं, बिनती है। जगदंबा को जिस भाव से बिनती करता हूं उसी भाव से उपासकों को बिनती करता हूं, अब यह बंद होना चाहिए। अब अपने यहां कुम्हड़ा काटते हैं। यह अच्छा है। पर अभी भी काटने की वृत्ति है। बलि के नाम पर हिंसा की वृत्ति बंद होनी चाहिए। फिर उसमें गुलाल डालते हैं। ये सब मन को फुसलाने के तरीके हैं। कुम्हड़ा भी बंद करो और करना ही तो पूरा ही डाल दो। काटिए मत। यह काटने की वृत्ति ठीक नहीं है। तुलसीदर्शन है कि यज्ञ-बलि प्रथा बदलिए। तर्पण का तरीका बदलिए। 'विनयपत्रिका' में तुलसी कितना बड़ा दर्शन देते हैं! 'प्रेम-बारि-तरपन भलो'; आप को अपने पितृ, श्रद्धेय, पूर्वसूरि, पूर्वजों को याद करते समय आंख में प्रेम के आंसू आए तो ऐसा कोई दूसरा तर्पण नहीं है। गलत मूल्यों को हटाइए। 'प्रेम-बारि-तरपन भलो, घृत सहज सनेहु।' हजारों मन घी यज्ञकुंड में डाल देते हैं! पुराने समय में घी-दूध की नदियां बहती थी। पर आज इतना सारा घी डाल देना! गुजरात में भी यह होता है। जैसी जिसकी श्रद्धा। तुलसी कहते हैं, हमारा परस्पर सहज स्नेह है। वही घी है। उसीसे अग्नि प्रज्वलित करे। पर यज्ञ में समिध, लकड़ियां चाहिए। तुलसी कहते हैं-

संसय-समिध, अगिनि छमा...

हमारे जो वहम हो, अंधश्रद्धा हो, संशय हो। इससे हम दु:खी होते हैं तो भी नहीं छोड़ते। वहम, छोटी-मोटी मान्यताएं समिध है। क्षमारूप अग्नि का प्रागट्य कर संदेह और वहम का समिध अंदर डालकर सहज स्नेह से यज्ञ कीजिए। ममता की बलि चढ़ाइए। 'ममता-बलि देहु।' यह सब से बड़ा बलिदान है। पांच सौ साल पहले यह तुलसी ने कहा था। जो कोई ऐसा यज्ञ, तर्पण करेगा, बलिदान देगा उसे तुलसी ने भजन का बिरुद दिया है। यह भजन है, कर्मकांड नहीं। यह ज्ञानयोग नहीं, भक्तियोग है।

जिन्ह यहि भांति भजन कियो, मिले रघुपति ताहि।
तुलसीदास प्रभु पथ चढयौ, जो लेहु निबाहि।।

तुलसी कहते हैं, अब मैं इस मार्ग पर चलता हूं। भजन मार्ग का यात्रिक हूं। किन्नर समाज की कथा क्यों मोरारिबापू करेंगे? तुलसी ने स्वीकार किया है। साधु-संतों ने, षडदर्शन ने स्वीकार किया है। यह समाज का कुंभ प्रवेश है। शाही स्नान में किन्नर का नाम है। 'रामचरित मानस' में कहा है-

देव दनुज किंनर नर श्रेनी।
सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनीं।।

मुझसे पूछा है, 'बापू, आपकी कुलदेवी कौन है?' संप्रदाय अनुसार हम निम्बार्कीय है। मैं नमन करता हूं। काली बिंदी करता हूं। हम कृष्णोंपासक है। मूल जगद्गुरु पीठ सालेमाबाद में, जहां अभी पूज्यपाद श्री श्री महाराज बिराजमान है। हमारी धर्मशाला मथुरा है। परिकम्मा गोवर्धन है। हमारी गोपाल-गायत्री है। हरिनाम हमारा आहार है। वेद-सामवेद। गोत्र अच्युत और कुलदेवी? रूकमिणी। मार्गी साधुओं की कुलदेवी रूकमिणी है। यह परंपरा है। पर अब तो मेरी कुलदेवी 'रामायण' है। व्यासपीठ को परिकम्मा करूं यही मेरी गोवर्धन परिकम्मा है। मेरा आहार हरिनाम है। अब ये सब एक ही है। मेरी कुलदेवी यह 'रामायण' है।

संशय, वहम, जूठी मान्यताएं, जंजीरें निकल जाय ऐसा कुछ करे। जो करना हो कर, मुक्त हो जा। जिसे हम ब्रह्मांड भांडोदरी कहते हैं वे हंमेशा विजय दिलाती है माँ चामुंडा, ये हारने नहीं देती। आप माँ कहकर निकले किल्ला फतेह! यह ('रामायण') विजय दिलवानेवाली माँ चामुंडा-अंबा है-

समर विजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान।
बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहि देहिं भगवान।।

कितने प्रमाण दूं? पहला नाम जयंती। जय दिलानेवाला 'रामचरित मानस' है। राम का जनम ही जय-विजय से शुरू हुआ। यह 'रामायण' मंगला है

मंगल करनि कलि मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।

रामकथा कालि है। 'रामकथा कालिका कराला।' भद्रकालि का नाम कालरात्रि है। 'मानस' में है-

कालराति निसिचर कुल केरी।
तेहि सीता पर प्रीति घनेरी।।

कपालिनी-

भट कपाल करताल बजावहिं।
चामुंडा नाना बिधि गावहिं।।

तुलसी ने भट कपाल और करताल दोनों जोड़े हैं। दोनों में भाग्यरेखा होती है। कपाल-हाथ में भी होती है। संकेत पकड़िए। कहा जाता है, विधिलेख भाल में है। दुर्गा; 'दुर्गा कोटि अमित अरिमर्दन।' तुलसी कहते हैं, 'रामायण' दुर्गा है; शिवा है। 'सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ।' यह स्वाहा है। 'भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें।' समर्पित भाव स्वाहा है। यह सब कुलदेवी में है। तुलसी ने बरसों पहले अगम प्रेरणा से ऐसे कदम उठाएं हैं। पूर्णकुंभ के प्रयाग में स्नान करने का अधिकार किन्नरों को दिया है। 'देव दनुज किंनर नर श्रेनी।' 'सादर' शब्द लिखा है। 'सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी।' राम किन्नरों का स्वीकार करते हैं। रामकथा किन्नरों का स्वीकार करती है। मोरारिबापू किन्नरों को स्वीकारते हैं। अस्पृश्यता रखनी हो वे रखे। मुझे भी मत छूना! रावण भी किन्नरों का स्वीकार करता है।

लागे किंनर गुन गन गावन।

मेहफ़िल में गंधर्व, किन्नर, रावण सत्कार करते हैं। यह तुलसी का बड़ा कदम था। अब समाज में परिवर्तन होना चाहिए। तुलसी ने नए यज्ञ की स्थापना की। विश्व को स्वीकृति का मंत्र दिया। अहिंसा कब से? बुद्ध से? इसके दो अर्थ होते हैं। परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी अक्षत्रिय की क्योंकि उस समय प्राय: हिंसाकर्म उनके हाथ में था। एक ऐसा ऋषि आया जिसे लगा इन हिंसक तत्त्वों को हटाए। कहते हैं, परशुराम ने इतने मारे। 'समर जग्य' स्वयं प्रयुक्त करते हैं। मैंने इतनी मुठभेड की, ऐसा खुद कहते हैं। हिंसात्मक तत्वों का हिंसा ने नाश किया होगा। वृत्ति नष्ट होनी चाहिए। कुम्हड़ा भी सीधा ही होम दीजिए। काटिए मत। कंकु डाल लाल करना यह रक्त का प्रतीक है। वृत्ति तो वही है ना? ये सब माताजी को फुसलाने की बातें हैं। 'अहिंसा रूपेण संस्थिता।' जो 'दुर्गासप्तशती' में नहीं है। तुष्टिरूपा, पुष्टिरूपा, निष्ठारूपा, लज्जारूपा। माँ का कितने रूपों में दर्शन है! पर अहिंसारूप में नहीं। जगत की जरूरत है कि माँ अहिंसारूप जन्मे। विद्यारूपा इत्यादि याद न रहे तो अहिंसारूपा याद रखना।

या देवी सर्वभूतेषु सत्य रूपेण संस्थिताम्।
या देवी सर्वभूतेषु प्रेम रूपेण संस्थिताम्।
या देवी सर्वभूतेषु करुणा रूपेण संस्थिताम्।

इस रूप में भी मैं तो रखूं। मैं उस रूप में देवी के दर्शन करता हूं।

सप्तवाणी की बात है। 'रामायण' में लगभग पैंतालीस से पचास रूप बताए हैं। सब का निरूपण करें तो बहुत लम्बा हो जाय। इसीलिए मैंने कहा, एडिट करूंगा। 'रामायण'रूपी देवी वाणीरूपेण है। तुलसी ने शुरू में ही 'वन्दे वाणी विनायकौ' कहा। शिववाणी, कल्याणवाणी। 'भद्रमस्तु कल्याणमस्तु।' मुंह से निकले शब्द से कल्याण हो, शुभ हो। 'शुभ हो, शुभ हो, धन्य हो, खुश रहो।' ये सभी शिववाणी है। 'मानस' में लिखित है-

सहस नाम सम सुनि सिव बानी।
जपि जेईं पिय संग भवानी।।

शिववाणी 'मानस' में जगदंबा का रूप है। 'शंकर' शब्द इसीका सगोत्रीय है।

रति गवनी सुनि संकर बानी।

शिववाणी की जगह शंकरवाणी किया। शंकरवाणी का अर्थ क्या है? शंकर का अर्थ 'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वासरूपिणौ।' तुलसीजी ने 'बालकांड' में शंकर का अर्थ 'विश्वास' किया है मंगलाचरण में। शंकरवाणी माने विश्वासमीय वाणी। हनुमानजी शंकरावतार है। अत: विश्वासमयी वाणी बोले हैं। जो मिशन लिया है वह परिपूर्ण होगा ही। जानकीजी की खोज करके ही आऊंगा। द्विधा नहीं कि होगा या नहीं। ब्रह्मवाणी तो हम कहां सुन सकेंगे? नमन करे। श्रेष्ठवाणी कई बोलते हैं। 'मानस' में है-

राजा रामु अवध रजधानी।
गावत गुन सुर मुनि बर बानी।।

'बर बानी' माने श्रेष्ठ वाणी। हमें लगे इससे श्रेष्ठ क्या हो? राम राजा और सीता रानी बने इससे श्रेष्ठ वाणी कौन-सी है? प्रेम, ज्ञान या सत्य राजा बने, भक्ति रानी बने इसके सिवा अंत:करण का रामराज्य और क्या हो सकता है? यह मृदुवाणी है। जीवन में कठोरता नहीं होनी चाहिए। मृदुवाणी माँ का रूप है।

निज माया बलु हृदयँ बखानी।
बोले बिहसि रामु मृदु बानी।।

●

ऐवा न वेण काढो के कोईना दिलने ठेस वागे।
वाणी उपर बधो छे आधार मानवीनो.

-नाझिर देखैया

वाणी पर ब्रह्मांड चलता है। उसका नाद, रव इस पर जगत चलता है।

गूढ-रहस्यवाणी। यद्यपि साधु गूढवाणी अधिकारी के पास खोल डाले। रबारी भाई सरजू का

गायन करे। उसके ताल, सूर मानो लोक सामवेद शुरू हुआ हो। उसमें कहीं शब्द आये ही नहीं। 'रामायण' में एक गूढवाणी की बात है-

कह मुनि बिहसि गूढ मृदु बानी।
सुता तुम्हारि सकलगुन खानी।।

प्रभु की समर्थवाणी-

सुनि बिधि बिनय समुझि प्रभु बानी।
ऐसेइ होउ कहा सुखु मानी।।

प्रभु का अर्थ समर्थ है। जो शास्त्र में व्याख्या है। महाराष्ट्र और पूरा देश जिसे समर्थ कहते थे वे थे समर्थ रामदास। जिसे बुद्धपुरुष में श्रद्धा हो उसे तय करना है। गुरु में निष्ठा हो; 'गुरुदेव समर्थ।' गुरु जितना समर्थ है उतना ओर कोई नहीं। गुरुदेव समर्थ है। मेरे त्रिभुवनदादा से बहुत मिला है। बहुत कम बोले। माला फेरते रहे। कभी बोले तब 'हे गुरु, तू समर्थ है।' प्रभुवाणी माने समर्थवाणी। जिस में यहां-वहां नहीं कर सकते। 'बोले सो निहाल।' ऐसी प्रिय बानी। शास्त्र कहते हैं, 'सत्यं ब्रूयातं प्रियं ब्रूयात्।' अपने यहां एक फेशन है कि हम कडुए लगते हैं जब सच बोलते हैं। पर यार, सत्य को थोड़ा मधुर कर दे। नींबू निचोड़कर थोडी सक्कर डाल कर पिला दे। प्रिय वाणी को माँ के रूप में स्थान दे।

पति हियँ हेतु अधिक अनुमानी।
बिहसि उमा बोलीं प्रिय बानी।।

जगदंबा बोली है। उमा प्रिय वाणी बोली है। रहस्यमय वाणी है। जल्दी पता न चले ऐसी वाणी। केवट 'रामायण' में बोला-

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन।।

कबीरसाहब बहुत लिखते थे। उलट बानी अध्यात्म बानी थी। 'बेटी ए जण्यो बाप।' 'नाव में नदियां डूबी जाय'; यह सब रहस्यवाणी है। बिना गुरु पता नहीं चले। नभवाणी-आकाशवाणी कहते हैं। आकाश दो प्रकार के है। एक बाहर है; एक चिदाकाश जो अपने भीतर है। उस वक्त नभवाणी थी। 'मानस' में 'मंदिर माझ भई नभ बानि।' उज्जैन के मंदिर में आकाशवाणी हुई है। वर्तमान में तो हम आकाशवाणी नहीं सुनते। शायद मेघगर्जना भी आकाशवाणी हो सकती है। एक बात तय है कि जिसने थोड़ा भजन किया हो, गुरुकृपा से अपने अंत:करण को धोने की कोशिश की हो उसे उस वाणी का पता हो न हो पर चिदाकाश की वाणी अवश्य सुनाई देती है। भीतर से वाणी के प्रागट्य को आकाशवाणी कहते हैं। यह नभवाणी जगदंबा का रूप है। निर्मलवाणी; 'अति निर्मल बानीं अस्तुति ठानी ग्यानगम्य जय रघुराई।' अनुचित वाणी; देशकालानुसार, व्यक्ति-अवस्थानुसार जो अनुचित वाणी है-

कही जनक जसि अनुचित बानी।
बिद्यमान रघुकुल मनि जानी।।

निर्भयवाणी; भयमुक्त वाणी। वाणी में सत्य होना चाहिए। सत्य के पुत्र का नाम अभय है। मैंने सत्य के परिवार का जिस तरह प्लानिंग किया है उसमें तो यही है। जगत में जिसका सत्य सगर्भा है उसे अभय पुत्र ही होगा। गांधी अभय थे क्योंकि उनके पास सत्य था। अपने यहां प्राचीन पदों में भी 'निर्भयपद'; 'अभयपद' ये सभी शब्द आए।

भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी।
रिस तन जरइ होइ बल हानी।।

लक्ष्मणजी निर्भय वाणी के वक्ता है क्योंकि 'मानस' में रामरूपी सत्य का अनुगमन करते हैं। शीतलबानी; ठंडक देती बानी।

अति बिनित मृदु सीतल बानी।
बोले रामु जोरि जुग पानी।।

मंगलवाणी; 'पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी।' मंगल उच्चारण। वेदवाणी; 'जय धुनि बिमल बेद बर बानी।' वेदवाणी-लोकवाणी को तो स्थान मिलना ही चाहिए। मैं इस जीवन में देखना चाहता हूं कि गांवों में श्लोक बोले जाते हो; शिक्षित घरों में लोकगीत कहे जाते हो; उस

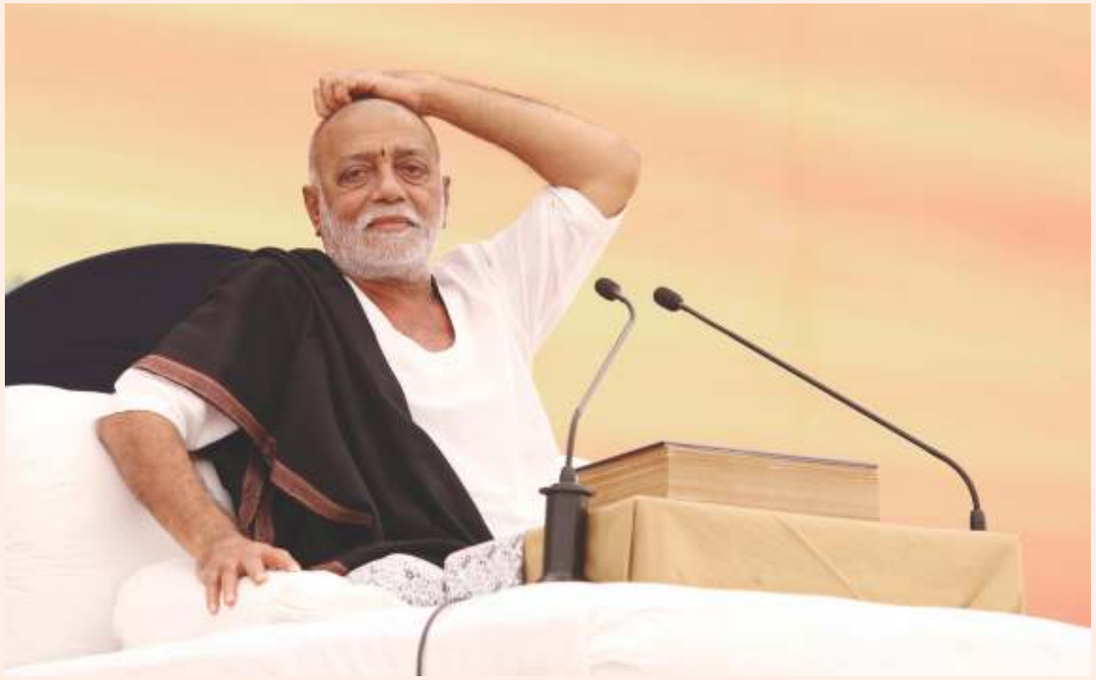

दिन लोक और श्लोक का सेतु बनेगा। वेदवाणी पर प्रत्येक का अधिकार है। कटुवाणी; कई कटुवाणी बोलते हैं-

कैकयसुता सुनत कटु बानी।
कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी।।

देववाणी; सुरवाणी; 'लखन राम सियँ सुनि सुर बानी।' संतवाणी; हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है। तुलसी ने 'मानस' में देवीरूपा संतवाणी को स्थान दिया है -

सुनि अति बिमल भरत बर बानि।
आरति प्रीति बिनय नय सानि।।

भरत संत है। सत्यवाणी-संतवाणी है। 'सीय मातु कह सत्य सुबानी।' अद्‌भुत वाणी; अवधूती दशा प्राप्तकर्ता की वाणी अद्‌भुत होती है। भीतर से अवधूती कमाई है।

ज्यों मुखु मुकुर मुकुरु निज पानी।
गहि न जाइ अस अदभुत बानी।।

भरतजी ऐसी अद्‌भुत वाणी के वक्ता है क्योंकि उन्होंने ऐसी अवधूती वाणी प्राप्त की है। आर्तवाणी; पीड़ा से प्रसव प्राप्त वाणी।

गीधराज सुनि आरत बानी।
रघुकुलतिलक नारी पहिचानी।।

लोकवाणी; मैं जिसे भूमिका मानता हूं। तुलसी लोगों के लिए 'पुरजन' शब्द प्रयुक्त करते हैं।

दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी।
मंदोदरी अधिक अकुलानी।।

अमृतवाणी; 'सुधा सम बानी'; सर्व स्वीकार्य सनातनी गुरुवाणी; 'जानि गुरुइ गुर गिरा बहोरी।' 'मानस' के आधार पर ये वाणी के स्वरूप है।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिताम्।
नमस्तस्यै: नमस्तस्ये: नमस्तस्यै: नमो नम:।।

मार्कंड आदि मुनियों ने लज्जारूपा माँ की प्रशंसा की है। लज्जा, मर्यादा, शील स्वयं स्वीकृत; लक्ष्मण रेखाएं, दबाव से नहीं। मीरां ने नृत्य किया होगा। आज भी कोई नृत्य करता होगा। पर स्टेज से बाहर न निकल जाय ऐसी स्वीकृत लक्ष्मण रेखा होती है। लक्ष्मणजी ने

सीताजी से कभी ऐसा नहीं कहा कि मैं बाण से रेखा खींचता हूं, आप इससे बाहर न निकलियेगा। पर लक्ष्मण को पता है कि यह माँ है। कहा कि 'माँ, मैं यह रेखा इसीलिए खींचता हूं कि इस रेखा के भीतर कोई नहीं आ सकता। स्वयं स्वीकृत लक्ष्मण रेखाएं लज्जा है। गांव की कन्याएं पानी भरने जाय। बाजार के बीच निकले तब एडी भी न दिखाई दे। गांव से पति-पत्नी दूसरे गांव जाते हो साथ-साथ भी न चले। आगे-पीछे चलते हैं। दिशाएं हमें देखती है। आकाश में से हमारे पूर्वज हमें देखते हैं। यह लज्जा भगवती का रूप है। ऐसा देखे तब समझिए कि माँ चामुंडा लज्जारूपा बनकर आई है। नौरात्रि की उपासना की पर अभी अंधेरा उलेचना बाकी है।

आज चिठ्ठी आई है, 'बापू, आपने रामजी के हथियार निकाल डाले; हनुमानजी के हाथों में गदा के बदले सितार पकड़ा दी तो फिर बगैर शस्त्र के रावण कैसे मरेगा?' क्या अब तक रावण मरा है? अभी तक रावण दहन चल रहा है! हाथ में हथियार हो तो भी कहां मरता है? मोहरूपा रावण कहां मरता है? राम भी भीतर है। शस्त्र से ही शांति स्थापित होती है यह सिद्धांत मत अपनाइए। देशकालानुसार शस्त्र उठाइए। पर शस्त्र से ही समाधान होता है ऐसा सिद्धांत मत बनाइए। रावण अभी भी है!

'लज्जा' नारी का आभूषण है। पुरुषों को भी लज्जा रखनी चाहिए। जिन्होंने स्वयंभू लज्जा धारण की उन्हें हम आगे नहीं आने देते। उन्हें कमरे में बंद कर रखे हैं। एक भी स्त्री को जगद्गुरु नहीं बनने दी है। एक बार आजमाईए। पराअंबा जगद्गुरु की पीठ पर बैठे। ईसाई धर्मगुरु स्त्री नहीं बन सकी है। अच्छा है कि बहनें महामंडलेश्वर बनती है। मंडलेश्वरी पद दिया जाता है। स्त्रीयों ने फरियाद नहीं की है। उनके पूर्वजों के लज्जायुक्त संस्कार काम करते हैं। कुलवान लड़के याद आए इसीलिए विद्रोह नहीं किया। अमरिका में तो अभी तक प्रेसिडन्टशीप तक नहीं पहुंच पाए! वे पूरी दुनिया को सलाह देते हैं! हमें सलाह दे और सहाय किसी और को! हद हो गई यार!

भारत ने राजनीति शास्त्र और समाज शास्त्र पाश्चात्य देशों से उधार लिया है। उसी पर से हमने नियम बनाए। लोकसभा में बहन स्पीकर है। एक समय में आदरणीय प्रधानमंत्री इंदिराजी; अपनी सी.एम.साहिबा बहन है। आप विवेक से तुलना कीजिए तो इस देश ने महिलाओं को जितना आदर दिया है उतना किसने दिया है? स्त्री स्वयं आगे नहीं आती वह उसकी मर्यादा, लज्जा है। लज्जा बहनों में तो है पर हमें रखने की जरूरत हैं। केवल खांसने से कुछ नहीं होता! हमारी भी मर्यादा है।

आज की पीढ़ी को तो बिनती करनी है कि देश-काल लागू हुआ है। ब्याह के समय वधू ज्यादा तेजस्वी दिखती है। दुल्हा क्यों कम दिखता है? यौवन को खास कहना है कि आप नाचिए। माँ के सामने झिंझिया लेना। पर यह ऋषि का देश है। मर्यादा रखना। ऐसे समाचार है कि युवा नशा करके खेलते हैं! तब मेरे भीतर की ज्योत मंद हो जायेगी। बेढंगे नृत्य मत करना। साहब, अपने पास ताल और सूर कैसे हैं! साहब, कैसे झिंझिया है! पाश्चात्य से लेने की क्या जरूरत है साहब! 'रामचरित मानस' में लज्जारूपा का बहुत दर्शन हुआ है। यह शास्त्र मर्यादासह आगे बढ़ता है।

सोह नवल तनु सुंदर सारी।

जानकीजी मंडप में बैठी है। पराअंबा का रूप है। उनकी जो शोभा है, सौन्दर्य है यह बिना कहे रह नहीं सकते। फिर भी लज्जा और मर्यादा का भंग न हो इसका ध्यान रखा है। माँ जानकी के नवल शरीर के सभी श्रृंगार आ गए। उम्र के अनुसार सात्त्विक सौन्दर्य है। फिर तुलसी ने आगे वर्णन नहीं किया। कालिदास की बात अलग है। यह तुलसीदास है, गोस्वामी है, गोसांई है। जिसने इन्द्रियों पर स्वामीत्व प्रगट किया है। तो जगदंबा का एक रूप लज्जा है।

कल राम के आगमन, भोजन, विश्राम की बातें की। 'सुंदरसदन' के आगे शाम के समय मिथिला के बालक रामदर्शन हेतु खड़े हैं। अंदर कौन जाने दे? ये तो राज्य के मेहमान है। उस समय लक्ष्मण के मन में ऐसा भाव जगा है कि ये अंदर तो नहीं आ सकते। क्यों न भगवान बाहर जाय? कुछ समाज उच्च मानव तक पहुंच नहीं पाते। उनके सामने स्वयं जाना चाहिए। यह प्रथा खड़ी करनी होगी। नई नहीं है पर भूल गए हैं। लक्ष्मण जीव के आचार्य है। उन्हें ऐसा भाव जगा कि राम बाहर जाय तो बात बने। रामजी समझ गए। रामजी को विश्वामित्र की अनुमति मिली। नगरदर्शन किया। बालकों ने प्रभु को आत्मसात् किया। जनकपुर के ज्ञानी गुरुजनों को राम के प्रति आकर्षण जगा है। पर कुछ जानने की चेष्टा न की। जनकपुर की महिलाओं ने अनुराग भाव से रामदर्शन किए। निष्कर्ष है कि तीन प्रकार से भगवद् दर्शन होते हैं। ज्ञानतत्त्व परम के प्रति आकर्षित हो पर बोले नहीं। बालक तो राम को छूकर, हाथ पकड़कर सब दिखा रहे हैं। उन्होंने राम को ज्यादा आत्मसात् किया है। पर धन्य है मिथिला की माताएं। झरोखे से राम को नीचे निहार रही है। जिनका सिर झुके उन्हें रामदर्शन हो। ज्ञानी देखते हैं पर भक्ति ईश्वर को अंदर-बाहर देखती है। भक्ति की महिमा मधुर विशेष है। दूसरे दिन जनकवाटिका में गुरु के लिए पुष्प लेने राम-लक्ष्मण गए। उसी समय सुनयना के कहने से जानकीजी सखियों के साथ बाग में आती है। सखी रामदर्शन कर आई उसके द्वारा सीताजी भी रामदर्शन करती है।

राम-लक्ष्मण लौटे। जानकीजी भवानी मंदिर में पुनः प्रवेश करती है। यह 'रामायण' में गौरी स्तुति है। देश की पुत्रियों को बिनती कि आप यह गौरी स्तुति करेगी तो ऐसा दुल्हा मिलेगा कि आप राम को भूल जायेगी। आप यह स्तुति करे तो शायद राम न मिले पर हराम भी नहीं मिलेगा। यह ऐसी स्तुति है जो गलत मार्ग पर जाने नहीं देती। कारण? यह तुलसी या मोरारिबापू ने नहीं की है। एक जगदंबा के सामने दूसरी जगदंबा का रूप खड़ा है। प्रार्थना करती है

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।

जानकीजी की स्तुति पर पार्वतीजी आशिष देती है। मूर्ति मुस्कुराकर बोली। मैं चमत्कार को एक और रखकर इस बात को मानता हूं। यह भाषा अलग हो सकती है। पर उस नाद को जानने की ग्रंथि खोल दे। हम में नये केमिकल्स पैदा करे। बाकी मूर्ति बोलती है। बुद्धि सब का स्वीकार न करे। बुद्धि का तो एक भाग ही जाग्रत हुआ है। वैज्ञानिक कहते हैं, जिस दिन पूरी बुद्धि खुलेगी उस दिन पराअंबा जाग्रत होगी। 'बुद्धिरूपेण संस्थिता।' मूर्ति न बोले तो यह हमारी कमजोरी है। कृष्ण बोले, हनुमान बोले। मौन देव नहीं चाहिए। जानकी स्तुति करे और भवानी न बोले? तुलसी की गौरी कितनी सौम्य है, शस्त्रविहीन है! 'जो सांवरो मन में बसा है, हे सीया, तुझे वह मिलेगा। उसके गुण कहूं! वे करूणानिधान है। सुजान है। तेरी प्रीत को जानता है। शीलवान है।' गौरी के आशीर्वाद से सीताजी भाव में आए। बायां अंग फ़ड़कने लगा। सीताजी लौटी। राम भी गुरु के पास गए।

वेदकाल से अहिंसा स्वीकार्य है। यद्यपि तथाकथित कर्मकांडों ने उस काल में भी यज्ञ के नाम पर, बलि के नाम पर हिंसा की है या अनुमोदित हिंसा की है। अपने यहां नरमेध यज्ञ की बात आई है। अश्वमेध की भी है। आज की सदी में तो मैं प्रार्थना करता हूं ब्राह्मण समाज को भी जिनके हाथ में यज्ञयागादि कर्मकांड है। जरूरी हो तब मैं कहता हूं कि यज्ञ के अंदर पशु तो कोई काटते नहीं। कहीं पर होगा। बंद हो तो अच्छा रहे। अब ये सब प्रासंगिक नहीं है। अपने यहां यज्ञ में कुम्हाड़ा काटते हैं। यह ठीक नहीं; वृत्ति अभी भी काटने की है! बलि के नाम पर हिंसा की वृत्ति निकल जानी चाहिए।

मानस-चामुंडा : ८

प्राणीमात्र में सत्य, प्रेम, करुणा रूप में दुर्गा बिराजमान है

गत संध्या को यहां तीसरा कार्यक्रम आयोजित हुआ माँ के आशीर्वाद से। समाज का एक वर्ग जो तिरस्कृत है, उपेक्षित है। समाज में स्थापित नहीं है या तो परिवार ही उसे विस्थापित करता है; उसे बाहर कर देता है। ऐसा एक बड़ा वर्ग किन्नर का है। इस समाज की कुछेक शिक्षित बहनें कल आई थी। फिल्मलाईन में भी प्रवेश है। नृत्य सीखी हुई थी। उन्होंने अपने ढंग से दर्शन कराया। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मानव को प्रेम करने की, स्वीकारने की, स्थापित करने की भावना से और खोया हुआ गौरव उन्हें प्राप्त हो इसीलिए विचार किया। मैं किन्नर समाज के लिए आदर व्यक्त करता हूं। फिर माणावदर की रासमंडली; तलवार-ढाल इत्यादि थे। ये शस्त्र की बात मुझे ठीक नहीं लगती। अहिंसा व्यासपीठ की बात है। कला और विद्या के दर्शन के लिए शास्त्र होने चाहिए, शस्त्र नहीं। तलवार विनाश के लिए नहीं होनी चाहिए। केवल रास के लिए होनी चाहिए। शस्त्र बहुत चले। पर जगत नहीं सुधरा। परिणाम उल्टे आते हैं। मैं पुन: तुलसीदासजी का शब्द याद करूं, 'रक्तबीज जीमी बाढत जाहीं।' रक्तबीज असुर की तरह बढ़ता जाता है। इतने वर्षों से संघर्ष, शापसृष्टि, युद्ध चल रहे हैं पर परिणाम कुछ नहीं निकला है। पूछा गया, 'तलगाजरडा के मंदिर में से धनुष-बाण हटा दिए तो फिर रावणबध राम कैसे करेंगे?' पर जिस दिन राम ने रावण को मारा फिर भी रावण कहां मरा है? हर दशहरा पर जीवित है! या वह एक स्मृति है, उत्सव है! जो भी हो। मेरी व्यासपीठ को ये अनुकूल नहीं है। रावण को खड़ा करे फिर दिल्ही में या जहां-जहां हो, सबके गुरुजन, चाहे बहन हो या भाई, बाण लेकर रावण को मारेंगे! यह कोई अच्छा दृश्य नहीं है। उत्सवरूप में ठीक है। पर भीतर में रावण कहां मरा है?

रावण को मारने शक्ति उपासना चाहिए। शस्त्र नहीं, शक्ति चाहिए। रावण के दस मस्तक थे। नौ मस्तक तो शक्ति ने काटे हैं। चाहे शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कुषमुंडा, भद्रकाली, कात्यायनी हो। शक्ति के एक-एक रूप ने काटे हैं। शक्ति यद्यपि राम के हाथ में रहती है पर ये नौ मुख तो शक्ति ने ही काटे हैं। दसवें मस्तक-वध में राम की मुख्य भूमिका है। समझना कठिन है। पर यह सच है। ये दबे हुए रहस्य है या प्रकट नहीं हुए हैं। राम तो परमात्मा है। क्या उनकी हाजिरी में शक्ति मस्तक काटे? हानि-लाभ की व्यापारी दृष्टि में से जगत को बाहर निकलना चाहिए। हम स्वयं को कहां तक ठगते रहेंगे? महाकवि निराला ने हिम्मत से राम से शक्तिपूजा करवाई। महाकाव्य लिखा। 'मानस' के क्रम में पहली वंदना राम की नहीं है। 'रामायण' में तो लिखा है, राम के सिवा दूजा कोई नहीं है। पहली वंदना फिर भी सीताजी की हुई है। प्रथम शक्ति-पूजा हुई है। 'रामायण' की चौपाईयां दुर्गा की है। दोहें-सोरठें राम-लक्ष्मण के हैं। चौपाईयों में राम कम है। शक्ति ही मिलेगी। शक्ति संख्या ज्यादा है।

चोटीले डाकलां वाग्यां चामुंडामानां,
चोटीले डाकलां वाग्यां...

अपने यहां देवी का वाद्य डुग्गी है। महादेव का डमरू है। दोनों का अर्धनारेश्वर जैसा संबंध है। दोनों का समन्वय है। रास में कहा, 'डुंगरा डोलवा लाग्या!' माँ चंडी ने जब राम रचाया टीले डुलने लगे! पर कौन से? हमारे पद, प्रतिष्ठा, अहंकार, धन के टीले डुलने लगे। माँ की डुग्गी बजे तब अहंकार के टीले डुलने लगे। ये तोडना नहीं चाहती। हिलाकर आदेश देती है। टूटते देर नहीं लगेगी। सावधान रहना। जो हिला सके वह जड़ से उखाड़ भी फ़ेंके। 'रामायण' में अहंकार का स्थान बताया है। वह एक खराब रोग है।

अहंकार अति दु:खद डमरुआ।

बहुत व्याख्या मांग ले ऐसा सूत्र है। तुलसी अभिमान के बारे में कहते हैं -

अस अभिमान जाही जनी भोरे।
सेवक रघुपती पती मोरे।।

हे ईश्वर, मैं राम का हूं। राम मेरे है। यह अभिमान कभी न निकले। राम मेरे प्रभु है, मैं सेवक हूं। जगदंबा चामुंडा मेरी माँ है और मैं उनका पुत्र हूं। अल्लाह करे, यह अभिमान कभी न जाय। यदि जाय तो टीले डोलने लगेंगे। इस रास में ऐसे संकेत है। दूसरी पंक्ति 'भूतडां भागवा लाग्यां।' हमारे यहां कई देवस्थान हैं कि आज भी कई लोग वहां जाय तो उनके भूत निकल जाय। मैंने सुना है कि अमुक दरगाह या किसी हनुमानजी के स्थान में ले जाय तो सभी भूत भागते हैं। अपनी-अपनी श्रद्धा है। चामुंडा की डुग्गी बजे और भूत भागे तो कहां? यहां तो कितनी डुग्गियां बजती है! नौरात्रि में तो मैं भी डुग्गी बजाता हूं। 'रामायण' डुग्गी है मेरी। नौ दिन बजाता हूं। आप सुन सके अत: मैंने वैज्ञानिकता रखी है। गुरुकृपा से मैं विनम्र प्रयास करता हूं कि समाजशक्ति जागृत हो। भूत भागे माने? कमजोर और विकृत विचार भूत है। केवल भूतकाल का शोक ही करना भूत है। भावि की चिंता पिशाच है। इस डुग्गी से हमारे भीतर के राग-द्वेषरूपी भूत भागते हैं।

लोकसंस्कृति की डुग्गी को मैं बड़ा वाद्य मानता हूं। आदर करता हूं। मेरे गांव में भवानभाई जोगी थे। अब नहीं रहे। मैं उनके लडकों से कहता हूं, डुग्गी विद्या का जतन करना। कोई न बुलाए तो चित्रकूट में हनुमानजी के सामने डुग्गी बजाना। पर डुग्गी विद्या व्यर्थ मत करना। भूत प्रेत माने राग-द्वेष भागे। नौ दिन तक माँ चामुंडा की डुग्गी बजेगी। हमें कुछ हुआ है इसलिए डुग्गी नहीं है। हम पर वशीकरण किया है इसलिए यह डुग्गी नहीं है। हमें परेशान करने मंत्र-तंत्र करते हैं। उसमें से मुक्त होने के लिए नहीं है।

मैं प्रसन्न रहूंगा यदि इस वादन पद्धति, संगीत, माताजी की स्तुति बरकरार रहे। सुरक्षित रहे। रेकर्डिंग हो जाय। समाज और युनिवर्सिटियों के पास यह रेकर्डिंग होना चाहिए। शताब्दियों तक यह रहे बहुत जरूरी है। सुरक्षित रखना होगा। मैं तो मदारी से भी कहता हूं, तू जो थैले में से निकालता है इसे तेरा बच्चा याद रखे। मैं झोंपडी दर झोंपडी जाता हूं। सबसे मिलता हूं। वे जब तलगाजरडा में आते हैं तब मैं कहता हूं, इन बच्चों को सीखाते जाईए, भाईसा'ब! कहे, 'बापू, उसे कौन देखता है?' मैंने कहा, मैं हूं तब तक देखूंगा। अपनी यह विद्या बहुत अद्‌भुत है। लोकविद्या का जतन होना चाहिए। मैं हृदय से निरीक्षण करता हूं कि ये नूतन-चेतनाएं अपनी है। ईश्वर जब निजत्व देता है तो उसे यथावत रखें। किसी ने कुछ किया तो बिना समझे दूसरों की नकल करते तालियां बजाते हैं यह मूढता है। हम अपनी शैली में रहे।

आपणे पोतानुं जीवन धन्य जईने जीवीए।
शाने काजे आपणे को अन्य थईने जीवीए?

- शोभित देसाई

हमारे माता-पिता, भाई-बहन परिवार, अपने हाथ-पैर, गला सब से प्रेरणा लेकर प्रस्तुति करे। ये सभी मंच अपनी अनोखी शैली में प्रस्तुत होते हैं। पर बहुत अच्छा है। मैं पुनः कहता हूं, कोई भी राज्यसत्ता, धर्मसत्ता या धनसत्ता मेरे देश की विद्या को अपने काबू में रखने की कोशिश न करे। मुक्त रहने दे। हमें धनसत्ता द्वारा कुछ फायदा हुआ हो तो स्वाभाविक जीव अनुसार हमें ऐसा लगे, उसको रखना चाहिए। पर नहीं, कम धन मिले तो चलेगा। पर निजता पकड़ रखे। राज्य-राष्ट्र की सत्ता के प्रोग्राम करे। मैं बिनती करूं, प्रोग्राम के पूरे पैसे लीजिए। कोई भी कम नहीं लेते! मेरा कलाकार कम दामों में न तौला जाय। आप ले इसमें गुनाह नहीं। देखना कि आधीन न कर ले! क्यों हो? आप अपना जीए। आगे बढ़िये। मैंने किसी का अनुसरण नहीं किया इसलिए यह ७० वर्षीय साधु चिल्लाकर बोल सकता है। क्यों हम दूसरे होकर जीए? सुरेशभाई दलाल मुझे पूछते थे, आपका आदर्श क्या है? उनको था मैं तुलसीदास, हनुमान, 'रामचरित मानस' कहूंगा। मैंने कहा, मेरा आदर्श मैं खुद हूं। मुझे मैं तक पहुंचना है। गनी दहींवाला की गज़ल है -

न धरा सुधी, न गगन सुधी, नहीं उन्नति न पतन सुधी.
अहीं आपणे तो जवुं हतुं फक्त एकमेकना मन सुधी.

हमें हम तक पहुंचना होता है। यह मैं सरेआम कहता हूं। मेरे कलाकार, विद्याधरो, संगीत, नृत्य, वक्तव्य हो समाज इन्हें सन्मानित करे।

गुरुकृपा से किसी की ओर दुर्भाव नहीं रखता। जब सत्संग का हेतु अलग हो और सत्संग को साधन बना दे तब काम पूरा होने के बाद आयोजक ढूंढने पर भी नहीं मिलते! कथा न दे तब तक पीछा नहीं छोड़ते! मेरा अनुभव है। काम पूरा हो जाय, अच्छी आमदनी हो जाय! अब तो मैं कहता हूं, गौशाला बनानी है? स्कूल बनानी है? मुझे अंधेरे में मत रखना। मुझे अंधेरे में भी सूझता है। मुझ में कोई विशेष शक्ति नहीं है। गांव में अंधेरे में घूमते हो तो देखिए अंधेरे का भी अपना उजाला होता है। मैं रात को तीन-तीन बजे अकेला बबूल को कथा सुनाने निकल पड़ता था। आषाढ का कृष्णपक्ष हो, अंधेरा हो फिर भी हम जानते हैं कि अंधेरे को अपना उजाला होता है। उजाले में दुनिया गुमराह हो जाती है। पर अंधेरे में भूली नहीं पड़ी है। मार्ग खोजे हैं। क्योंकि अंधेरे में से ही उजाले का मार्ग शुरू हो जाता है। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय...' इसकी यात्रा का आरंभ अंधेरे से ही होता है। यह सोचना चाहिए।

मेरे पास कई लोग आकर कहते हैं, सभी यजमान तैयार है। सब ठीकठाक है। 'स्वान्तः सुखाय' कथा करनी है। खर्चा उठानेवाले सभी आ गए हैं। आप आइए बस। फिर देखिए धमाचौकड़ी! फिर मेरे पास ऐसे रिपोर्ट आए कि छोटी-छोटी बातों के लिए भी पैसे वसूले जाते हैं! स्पष्ट करे। या तो मैं ही कथा करूं। होस्पिटल आदि के लिए नहीं की है? आपको तकलीफ हो; धर्मक्षेत्र के लिए मैं काम न लगूं तो मैं साधु कैसा? पर मुझे अंधेरे में मत रखिए। मैं दो कथाएं से कहता हूं। मैं पीड़ा के साथ मेरा अनुभव कहता हूं कि हे समाज, साधु को साधन मत बनाइए। साधु समाज का साध्य है। फ़कीर को साधन मत बनाइए। फ़कीर अपना लक्ष्य होना चाहिए। या तो स्पष्ट कह दे, हमें सत्संग कराना है पर हेतु यह है।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिताम्।
नमस्तस्यै: नमस्तस्ये: नमस्तस्यै: नमो नमः।।

वेद ने सप्तवाणी कही। हम सभी में, प्राणीमात्र में चामुंडावाणी बिराजमान है। हमने कल थोड़ी चर्चा की है।

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।

लज्जा, मर्यादा चंडी है। हम में लज्जा रहे; मर्यादा रहे; शालीनता रहे। ये सभी तत्त्व जब हम में रहे, किसी में रहे तब मानना कि लज्जारूपा माँ चामुंडा बैठी है। कितने विशाल तत्त्वों को लेकर बैठी है! हमें सीख दी गई है कि भजन करे वे जागते रहे। चौबीस घंटे जागने की जरूरत नहीं है। जो नहीं जागते वे सोये रहते हैं। वे क्या भजन करे? जब चामुंडा या जगदंबा के स्वरूपों का वर्णन पढ़ते हैं तब शास्त्र कहते हैं -

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।

आगे देवी के सरल रूप की स्थापना कौन करेगा सिवा कि मेरे देश के ऋषि? मेरे गांव के भाईयों और बहनों, सारा दिन खेत में काम किया हो; पूजापाठ नहीं जानते; कथा श्रवण के बाद लगे कुछ करना चाहिए। पर नींद आ जाय तो ग्लानि हो कि सो गए, कुछ करते नहीं! तो भी चिंता न करे। चामुंडा-चौक में शास्त्र की बात आप तक पहुंचाना चाहता हूं, आपको जो नींद आ जाती है तो वह नींद भी चामुंडा है। फिर हल्केफूलके कैसे होते हैं? 'निद्रारूपेण संस्थिता।' जगद्गुरु शंकराचार्य निद्रा को सामधि का पद देते हैं। पतंजलि भगवान का एक विचार तो यों भी कहता है कि जागृति भी तू है, सुषुप्ति भी तू है। स्वप्न भी तू है। स्वप्न भी, निद्रा भी तू है। इससे ज्यादा सरल क्या हो सकता है? हमें नींद आती है यही जगदंबा है। प्राणीमात्र में ये बिराजमान है। नींद करे। ज्यादा जागना ठीक नहीं। साधु-संतों का जागरण अपवाद है। ये सिद्धांत नहीं बन सकता।

नींद आए तो सो जाइए। पूरा परिश्रम करने के बाद निद्रा समाधि है। यह भगवती अंश का रूप है। 'भगवद्कथा' में लिखा है, ज्यादा सोनेवाले या जागनेवाले योग प्राप्त नहीं कर सकते। ज्यादा खानेवाले या भूखे रहनेवाले योग को आत्मसात् नहीं कर सकते। इसीलिए युक्त आहार-विहार की हमारे यहां महिमा है। मुझे माँ का यह रूप ज्यादा पसंद है, 'निद्रारूपेण संस्थिता।' बाज़ार में कुल दो मिनट सो जाय तो वह नींद परमशक्ति की दी हुई है। भूतमात्र में रही हुई निद्रा देवी का रूप है। यह शास्त्रीय बात है। कई मुद्दे हैं। जो पाठ में नहीं है वह मैं कहना चाहता हूं। ज्यों अहिंसारूपेण पाठ में नहीं है। कोई महापुरुष किसी शास्त्र में नहीं है ऐसा जब कहे, एड करे, तब तथाकथित पंडित कहे, इसने शास्त्र का खंडन किया है! पर उन्हें पता नहीं है कि इसमें न तो जोड़ा जा सकता है या कम किया जाता है। यह शाश्वत और सनातन धर्म का सिद्धांत नहीं है। वह तथाकथित धर्मों में है कि जिसमें आप न तो कम कर सके या जोड़ सके। भारतीय शास्त्रों में यह छूट है। कबीरसाहब का वक्तव्य है। मेरा पसंददीदा है। कबीर से किसी ने कहा कि सनातनधारा में जो कुछ आध्यात्मिक सिद्धांत है उसमें कर्मकांड भी आ जाता है। आप इसका खंडन करते हैं। कबीर ने कहा, 'साधु कभी भी खंडन नहीं करता। जो खंडित है उसे पूर्ण करता है। समय भी प्रतीक्षा में है कि कोई बुद्धपुरुष आकर उसे पूरा करे। अतः शास्त्र का खंडन नहीं होता। देशकालानुसार जो जोड़ना है, कोई बुद्धपुरुष इसकी व्यवस्था करता है।' कबीर का जवाब अद्भुत है। खंडन करने से साधु का फायदा क्या? उसे कहां कोई प्रमाणपत्र लेना है? कहां कोई एवोर्ड लेना है? क्यों खंडन करे? वह पूर्ति करता है। देशकालानुसार करता है। 'अहिंसारूपेण संस्थिता' यह स्तोत्र में नहीं है। तो ऐसा मत मानिए कि कुछ खंडन हुआ है या कुछ नया डाला है। यह पूर्ति है। ऐसे सूत्रों से हम पूर्णता तक पहुंचेंगे।

आज बात करनी है; जो नहीं है वह सामने रखना चाहता हूं। यह मेरी जिम्मेदारी है। ठीक लगे तो आशीर्वाद दीजिए। न लगे तो मेरी जिम्मेदारी रहेगी।

या देवी सर्वभूतेषु सत्यरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।
या देवी सर्वभूतेषु प्रेमरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।
या देवी सर्वभूतेषु करुणारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

आप-से मेरी व्यासपीठ यह संवाद करना चाहती है। हे देवी, हे चामुंडा, तू प्राणीमात्र में सत्य, प्रेम और करुणारूप में बैठी है। स्तोत्र में? दयारूपेण तो है ही। इसे हम 'करुणारूपेण' जोड़ सकते हैं। 'कृपारूपेण' भी जोड़ते हैं। मुझे लगता है इक्कीसवीं सदी में ये सूत्र जरूरी है। यह नया नहीं है। हम में जगदंबा सत्यरूपेण बिराजमान है। प्रेमरूपेण भी है। करुणारूपेण है। चामुंडा सत्य, प्रेम, करुणा है। जितनी भी मात्रा में सत्य हो; हम कोई हरिश्चंद्र थोड़े ही है! हम संपूर्ण सत्य नहीं बोलते। पर जितनी भी मात्रा में हो उतनी अंबा हमारे अंदर है। सत्य की परिभाषा क्या है? यह सोने की लगड़ी है। चंद्र से पथ्थर लेकर आए क्या यह सत्य है? क्या पहनी हुई सोने की अंगूठी है? क्या सत्य हार्मोनियम है? माईक है? सत्य का सगोत्री शब्द है 'भजन।' हम में थोड़ा बहुत भजन हो तो समझिए हम में सत्यरूपी चंडिका बैठी है। ऐसा 'रामायण' में शंकर बोलते हैं -

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

सत्य क्या है? हरिभजन है। ऐसा 'मानस' में शंकर ने कहा है। हम में थोड़ा बहुत भजन है। भजन गाना, लिखना, सेमिनार करना यह भी भजन है। श्रवण करना भी भजन है। समझना भी भजन है। हम सुने, गाये, लिखे। ये सब भजन है। प्रमाण क्या है? सीधा-सादा गणित है। प्रमाण एक ही है कि माँ हमारे भीतर सत्यरूपेण बैठी है। तो इसका प्रथम लक्षण विवेक है। यह शास्त्रमय अर्थ है। एक भजन गाता हो फिर दूसरा गाता हो तो विवेकपूर्ण दाद देनी चाहिए। यह इसका प्रमाण है कि मुझमें सत्यरूपेण चंडिका बैठी है। विवेक आए तो समझना चाहिए कि हम में सत्य है। शास्त्रसंमत बात है -

बिनु सतसंग बिबेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।

सत्यरूपा माँ हम में बिराजमान है। हम में विवेक होना चाहिए। विवेक आने से समझना चाहिए हम में सत्य है।

या देवी सर्वभूतेषु प्रेमरूपेण संस्थिता।

हम में माँ सत्रूपा बिराजती है। सत्य का संग विवेक देता है। व्यासपीठ कहती है -

या देवी सर्वभूतेषु प्रेमरूपेण संस्थिता।

हर एक में सत्य पड़ा है। अपनी पात्रतानुसार श्रद्धा हमारे भीतर बैठी है। वे न हो तो हम ऊर्जाहीन है। सत्य स्वरूपा माँ बैठी है। वही माँ प्रेमरूपिणी है। नारदजी ने प्रेम के लक्षण बताए हैं।

गुणरहितम्, कामनारहितम्,
अविच्छिनम्, प्रतिक्षण वर्धमानम्।

ऐसे लक्षणवालों प्रेम जो अपने में न हो तो समझना प्रेम नहीं है। चामुंडा मुझ में और भूतमात्र में बिराजमान है। हम में प्रेम हो तो समझना हम में माँ बैठी है। पर इसका प्रमाण क्या है? प्रेम का संग करने से परिणाम क्या मिलता है?

भरत दरस देखेउ खुलेउ मग लोगन्ह कर भाग।

भरत प्रेम है। 'रामचरित मानस' में जिन्हों ने भरतरूपी प्रेम के दर्शन किए उनके भाग्य खुल गए। हमें लगे कि हम दुर्भागी थे, मंदभागी थे! पर जब लगे कि शरीर में स्फूर्ति, मन में प्रसन्नता का संसार है तब समझना कि हम में प्रेमरूपी जगदंबा बैठी है। हमें उनका संग हुआ है। प्रेम आदमी को जीने की प्रेरणा देता है। जो आत्महत्या की प्रेरणा दे वह प्रेम नहीं है। वह मोह, मूढ़ता और नकली आकर्षण है। प्रेमी कभी भी आत्महत्या नहीं करता। हा, समाज प्रेमी को मार डाले यह अलग बात है। जिसस ने आत्महत्या नहीं की। उनके ही आदमियों ने मार डाला है। वे स्वयं मरे नहीं हैं। माँ प्रेमरूप बन हममें बिराजती है। उनके संग होने से हमारा भाग्य खुल जाता है। मुझे तो ऐसा लगे है कि 'रामायण' प्रेमरूप है। सत्यरूप है। इनके संग से हममें थोड़ा विवेक जागृत होता है। कोई अन्य नहीं तो हम में कितना, कैसे बोलना, कैसे चलना, व्यवहार रखना, छोटे-बड़ों से कैसे संतुलन रखना, विवेक रखना इतना विवेक तो आ ही जाता है। प्रेम 'रामायण' के संग से भाग्य खुल जाते हैं। भूतकाल के बारे में सोचना नहीं है। यदि यह 'रामायण' न होती तो हम क्या करते? थोड़ा-सा खुला भाग्य भी बंद हो जाता। मेरा तुलसी कहता है, हरिनाम के कारण हाथी पर बिठा दिया है। यह किसका प्रताप है? यह विचार मैं अपने दिमाग से कभी निकालता नहीं। इतनी गुरुकृपा, व्यासपीठ की कृपा, 'मानस' की करुणा, संतों के आशीर्वाद, सबकी शुभकामना जहां भी जाऊं सब सुनाई देता है। इतनी सारी संख्या में आकर बैठते हैं साहब! मेरे तो भाग्य खुल गए! यह प्रेम का संग है। तीसरा सूत्र -

या देवी सर्वभूतेषु करुणारूपेण संस्थिता।

हे माँ, तू प्राणीमात्र में करुणारूप निवास करती है। जिसकी आंख में करुणा देखें तो समझना इसकी आंख में जगदंबा है। पराअंबा है। राम सत्य है अतः तुलसीदास ने राम को कालिका कहा है। राम की कृपा भी कालिका है। तुलसीदासजी गंगा को भी कालिका कहते हैं। गंगा प्रेम है। राम सत्य है। राम की कृपा करुणा है। तुलसीदास तीनों जगह पर 'कालिका' शब्दप्रयोग करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि सत्यरूपेण, प्रेमरूपेण, करुणारूपेण संस्थिता - निश्चित है। यह आध्यात्मिक त्रिकोण है। इन्हें तीन हिस्सों में नहीं बांट सकते क्योंकि ये जुड़े हुए हैं।

सत्य, प्रेम, करुणा आध्यात्मिक-त्रिकोण है। तीनों अपने में होती है। माने 'सर्वभूतेषु' प्राणीमात्र में

सत्य, प्रेम, करुणारूप में माँ बिराजमान है; चंडी-दुर्गा बिराजमान है। तीनों चीजें एड करनी है। मैं खंडन नहीं करता पर मेरे व्यक्तिगत विकास के लिए कहता हूं। शत्रुघ्न आदि भाईयों के ब्याह की कथा गाई।

दूसरा सोपान 'अयोध्याकांड।' 'अयोध्याकांड' यौवन है। यौवन में शिवस्तुति करनी चाहिए। बल-विद्या बुद्धि विकसित होगी। ये मार्गदर्शक सूत्र है। बायें पार्वती, भाल पर गंगा, ललाट पर चंद्रमा; कंठ में ज़हर; सर्पों के झुंड; भस्म लेपन। हे युवा, यौवन में ब्याह होगा। पत्नी को बायीं और रखना; सम्मान करना; हृदय जितना आदर देना। भाल पर गंगा पतितपावन भक्ति का प्रतीक है। विवेक और समझदारी की गंगा रखना। यौवन में संयमपूर्वक उपभोग करना। चंद्र की तरह प्रकाश रखना। जीवन में ज़हर पीना; नीलकंठ की तरह पचाना। तू शंकर अंश है। शंकर ने भस्म लगाई है। शरीर को एक बार राख होना है। यह स्मरण रखना। धीरे-धीरे आसक्ति आयेगी। युवा भाईयों-बहनों, यह गुरुवंदना है। यौवन में जब पायदान चढ़ाये जाय तब किसी के मार्गदर्शन को लेकर चढ़ना। कोई गुरु होना चाहिए। जब यौवन में मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार यों अंदर से धक्का मारकर कहे कि शरण में जाना चाहिए। किसी बुद्धपुरुष के शरण में जाना चाहिए। बुद्धपुरुष वह है जो किसी को बांधता नहीं पर बुद्ध बना दे। ऐसे किसी महपुरुष का आश्रय अत्यंत जरूरी है। अत: गुरुवंदना की है। हमारे अंदर की विकृतियों को कन्ट्रोल करनेवाला कोई तत्त्व है। वह गुरु है। वह काम-क्रोध की स्विच बंद नहीं करता पर उस समय कितनी मात्रा में तेरी ऊर्जा तेरे शरीर में बहनी चाहिए इसकी एक स्विच होती है। ये अध्यात्मजगत के बुद्धपुरुष के हाथ में होती है। वह हमें कन्ट्रोल करता है। किसी के आश्रय में रहना नितांत आवश्यक है। यौवन में मार्गदर्शक की जरूरत होती है।

उसने देखते ही दुआओं से मुझे भर दिया।
मैंने तो अभी सजदा भी नहीं किया था।।

-राज़ कौशिक

'अयोध्याकांड' में सुख-समृद्धि का वर्णन है। अतिवृष्टि नुक्सान करती है। जीवन में सुख जरूरी है। पर इसके साथ-साथ थोड़ा गम भी जरूरी है। 'मानस'कार लिखते हैं, अयोध्या में सभी लोग हर प्रकार से सुखी है। पर यह दिमाग में बैठता नहीं है। सुख के बाद दु:ख के प्रसंग आते हैं। दशरथजी दर्पण में देखते हैं। सफेद बाल कान में उपदेश देते हैं कि राज्य राम को सौंप दे। वशिष्ठजी से पूछते हैं। एक रात के बाद सौंपना तय होता है। कैकेयी की ममता विघ्न डालती है। कल राम बनवास देखेंगे।

मेरे पास कई लोग आते हैं और कहते हैं, बस बापू, यजमान हो गए हैं। सब निश्चित हो गया है। स्वान्त: सुखाय ही कथा करनी है। फिर रिपोर्ट मिलती है कि छोटी-छोटी चीजों के लिए भी उगाही शुरू हो गई हैं! आप स्पष्ट कहिए। या तो मैं ही कथा करूं। क्या मैंने होस्पिटल और अन्य के लिए कथा नहीं की है? आपको तकलीफ़ हो धर्मक्षेत्र में और काम में ना आऊं तो साधु कैसा? पर मुझे अंधेरे में मत रखिए। मैं अपने अनुभव पीड़ा के साथ व्यक्त करता हूं। साधु को साधन मत बनाइए। साधु समाज का साध्य है। फ़कीर को साधन न बनाइए। फ़कीर तो अपना लक्ष्य होना चाहिए। या तो स्पष्ट कहिए कि हमारा हेतु ऐसा है। सत्संग कराना है।

मानस-चामुंडा : १

रामकथा तो कुरबानी की कथा है

'मानस-चामुंडा'; रामकथा के नौवें दिन पर आप सब को प्रणाम। एक प्रश्न। 'रामकथा पाठ करने से क्या फ़ायदा?' 'रामचरित मानस' का सीधा पाठ तो आप करते हैं पर मेरे दादा ने उलटा पाठ करने को कहा था। आखिरी पंक्ति पहले पर सीधी रीति से कहनी। दादाजी का मंतव्य था-

उलटा नामु जपत जगु जाना।
बालमीकि भए ब्रह्म समाना।।

उलटे जाप की महिमा है। जिसे शुरू करना हो, सिद्ध न होना हो वे शायद सीधा पाठ न कर सके पर उलटा पाठ करे तो भी आपत्ति नहीं। मूल साररूप बात कही। मैं विशिष्ट समय पर नौरात्रि का पाठ करता हूं। रामकथा महीने में पूरी हो पर शाम को मैं एक पन्ना देखता हूं। इसमें चार-पांच दोहे आ जाते हैं। जरूरी नहीं कि आप भी करे। आप पूछते हैं इसीलिए कहता हूं। पर फायदा क्या? फायदा देखना हो तो काम-धंधे पर लग जाओ। परमात्मा ने दी हुई बुद्धि से पुरुषार्थ कीजिए। लाभ होगा। पर केवल लाभेच्छा से न करना। मेरी दृष्टि से हम यह कर सके यही बहुत बड़ी बात है। क्या यह हो सकता है? आप नमाज पढ़ सके यही बड़ी बात है। यही लाभ है ओर क्या? जिस समय जो घटना बनें उसमें रुचि न हुई तो मेरी दृष्टि में उधार में कुछ नहीं होता। रामनाम जपने से क्या फायदा? आपने जपा यही फ़ायदा। नहीं तो हराम तो हम रोज जपते हैं! धर्मजगत में फ़ायदें बताए तो सांप्रदायिक जगत में तो और भी ज्यादा बताए। प्रलोभन और भय बताए। यह मुझे कुबूल रखना चाहिए। आध्यात्मिक बात में 'लाभालाभौ जयाजयौ' लाभ-अलाभ, जय-पराजय ये सभी द्वन्द्व समाप्त हो जाते हैं। मैं तो 'भगवद्गीता' का पाठ भी उलटा करूं। यह मेरा क्रम है। हर रोज एक अध्याय।

गोस्वामीजी ने समग्र 'रामचरित मानस' के दर्शन में राम, गंगा, राम की आरती के लिए, 'रामायण' के लिए 'कालिका' शब्द का प्रयोग किया हैं। तुलसी के 'कवितावली' ग्रंथ में 'चामुंडा', 'चंडिका' इत्यादि शब्द मिलते हैं। गुरुकृपा प्राप्त दृष्टि से देख सकते हैं कि 'रामचरित मानस' और समग्र तुलसीदर्शन में सब से ज्यादा शब्दब्रह्म प्रयुक्त हुआ है वह 'कालिका' है। इसे उलटा-सूलटा बोले तो भी वही रहता है। यदि धंधा बराबर रहे ऐसी लाभदृष्टि से करते हैं तो लगभग बंद पड़ जाने के चान्सीस है! 'भागवतजी' में लिखा है जो सत्यपथ पर चलेंगे, धर्मपथ पर चलेंगे 'शनै: शनै:' उसका धन मैं कम करता हूं। अपने यहां आश्वासन है कि धर्म बढ़े, उसका धन बढ़े। कौन साधन? विश्वास का धन बढ़े। आत्ममंथन बढ़े। जीवन जीने का हौंसला बढ़े। बाकी तो धन कम होता ही है। धन बढ़े उसका मन बढ़े। यह सब उपर से ठीक लगता है पर फीट नहीं है। हमने शायद ही देखा हो कि जिसका धन बढ़े उसका मन बढ़े! धन बढ़ने पर मन घटे यह देखा गया है! धन नहीं था तो मन आठ फीट के थे, धनप्राप्ति के बाद दो फीट का हो गया! आपकी

शुभकामना-गुरुकृपा से मैं 'रामायण' लेकर पूरी दुनिया में घूमता हूं, अत: अनेक अनुभव होते हैं। मन नहीं, मन की तृष्णा बढ़ती है। सच है कि मन बढ़े तो मान बढ़े। मन बड़ा हो तो मान बढ़े। जिसका धन घटे उसका मन घटे। मन घटे यह सच नहीं है। मान बढे यह सच है। मन बड़ा हो तो मान बढ़े। धन घटे, मन घटे यह सच नहीं है। जिसके पास धन नहीं है उसका मन बड़ा होता है।

यहां एक फायदा हुआ। मैं गांव में भिक्षा लेने जा सका। यह बड़ा फायदा हुआ। नौरात्रि में नौ संध्या को आखिरी आदमी तक जा पहुंचा, बैठ सका। मेरे गंगाजल से बाजरे की रोटी बनाकर खा सका। उनके पास धन नहीं पर मन बहुत बड़ा है। उनके पास धर्म का कर्मकांड नहीं है। पर मैंने देखा कि मेरे साथ तो पूरा काफ़िला है। उन्होंने प्रेम से कहा, सबको भोजन करायें। मुश्किल से ना कही। धन से कभी भी विश्राम प्राप्त नहीं होता। जब धन का मोक्ष सत्कर्म में होता है तब परम विश्राम प्राप्त होता है। सांप्रदायिक क्षेत्रों में प्रलोभन दिए जाते हैं। ग्रन्थों और स्तुतियों में भी ऐसे प्रलोभन दिए जाते हैं। आप 'दुर्गासप्तशती' लीजिए। कुछ मंत्रों का जप करेंगे तो यह मिलेगा। यह सब ठीक है। पर अध्यात्म में जिसका प्रवेश हो गया, सत्य-प्रेम-करुणा में प्रवेश हो गया उसे जय-पराजय, लाभ-अलाभ, स्वीकार-तिरस्कार ये सब द्वन्द्व छूट जाते हैं। लाभ क्या? सबसे बड़ा लाभ कि हमें मनुष्यदेह मिला है।

मुझे कल अखबारवाले मिले थे। पूछा, 'आपका अंतिम उद्देश्य क्या है? आपकी कोई इच्छा?' मैंने कहा, मेरा कोई उद्देश्य नहीं है। राजेन्द्र शाह की कविता है-

निरुद्देशे निरुद्देशे,
संसारे मुज मुग्ध भ्रमण पांशु मलिन वेशे...

अपने निरंजन भगत कहते हैं-

हुं तो बस फरवा आव्यो छुं!
हुं क्यां एके काम तमारुं के मारुं करवा आव्यो छुं?

मैंने कहा, इस विराट ब्रह्मांड में पृथ्वी पर भारत भूमि में जहां गंगा बहती है वहां एक छोटा-सा राष्ट्र सौराष्ट्र और सौराष्ट्र में तिल जितना गांव तलगाजरडा, उसमें रामजी मंदिर के पास एक कमरा और एक देशी जर्जरित मकान, उसमें अंदर के कमरे में सावित्री माता की कोख से जनम हुआ। मेरे दादा की ओर से मिली 'रामायण'; उसके प्रताप से जगत से मिला आदर, प्रेम, स्नेह; अब मेरा उद्देश्य क्या हो? मानव जीवन मिला यही काफ़ी है। तुलसी कहते हैं-

बडे भाग मानुष तनु पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।

इससे बड़ा क्या लाभ? हम भाव-कुभाव से प्रभु के गुणगान गाते हैं। इससे बड़ा लाभ क्या हो सकता है?

लाभ की दृष्टि से कुछ भी मत कीजिए। श्रम कीजिए। संतों की, माँ की उपस्थिति में गर्जना करता हूं कि मैंने कभी भी लाभ के लिए रामकथा नहीं की है। रामकथा करवाने वाले बहुत लाभ उठा गए! कथा गुणगान जैसा लाभ क्या है? इस काम को कोई फलांग न सके। इसीसे लाभ या फल ज्यादा मत सोचिए। लाभ हो वहां हानि भी है। यह द्वन्द्व है। सापेक्ष है। इसे अलग नहीं कर सकते। अध्यात्मजगत के कारण आदमी निर्द्वन्द्व हो जाता है। या द्वन्द्वों के सामने साक्षीभूत बना देते हैं। एक दृष्टा बना दे ऐसी यह अध्यात्म की देन है।

रामकथा स्वयं चामुंडा है। कालिका है। आज विराम की ओर जा रहे हैं तब संक्षेप में कहूं। कल 'बालकांड' पूरा किया। 'अयोध्याकांड' में सुख की बारिश है। हरा अकाल है। थोड़ी धूप जरूरी है। अयोध्या में चौदह साल की दु:खभरी बदली छाई है। राम-लक्ष्मण-जानकी का बनबास है। गंगातट पर केवट का स्वीकार होता है। चित्रकूट पर निवास है। सुमंत लौटता है। अवध में दशरथजी का प्राण त्याग है। भरत का आगमन। माँ प्रति आक्रोश है। पितृक्रिया हुई। सभा मिली। अयोध्या की गद्दी के बारे में चर्चा होती है। सर्वानुमत से भरत शासन संभाले ऐसा प्रस्ताव आया। भरत अपने हृदय की विवशता का कथन करते हैं। उनका दृढ निवेदन है कि रामजी ही मेरे पथ्य है। समग्र अयोध्या का चित्रकूट प्रयाण। महाराज के निर्वाण प्रति शोक। जनकजी के समाज का आगमन। अनेक सभाएं हुई। भरतजी ने समर्पण किया, 'हे हरि, आपका मन प्रसन्न रहे ऐसा निर्णय कीजिए।' प्रेम हंमेशा ऐसा बलिदान देता है। निर्णय हुआ। राम चौदह साल बन में रहे। सब लौट जाय। भरतजी बिदा के लिए तैयार हुए। प्रभु को लगा, भरतजी को आधार देना चाहिए।

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

भरतजी ने पांवरी मस्तक पर रखी है। शुभ दिन देखकर पांवरी राजगद्दी पर स्थापित की। फिर गुरु की आज्ञा लेकर, माँ को पूछकर अयोध्या से बाहर नंदिग्राम में पर्णकुटि बनाकर बन में रहकर भवन का कामकाज करते हैं। भरतजी ने वल्कल वस्त्र धारण किए हैं। रामकथा तो कुरबानी की कथा है। यहां त्याग को लेकर हर पात्र स्पर्धा करता है।

'अरण्यकांड' में प्रभु चित्रकूट छोड़कर मुनियों से मिलकर पंचवटी में निवास करते हैं। लक्ष्मणजी को बोध और शूर्पणखा को दंड मिलता है। खर-दूषण का निर्वाण होता है। रावण द्वारा मारीच की सहाय से सीता का अपहरण होता है। मारीच का निर्वाण हुआ। जटायु शहीद हुआ। बिना सीता की सूनी पर्णकुटि देखर कल्पांत करते हैं। जटायु का संस्कार हुआ। कबंध राक्षस का उद्धार किया। शबरी से मिलन हुआ। नवभक्ति की चर्चा की। शबरीजी योगाग्नि में समा गई। फिर पंपासरोवर के पास नारदजी के साथ सत्संग किया। 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किंधाकांड' में हनुमानजी के माध्यम से राम-सुग्रीव की मैत्री होती है। बाली का निर्वाण होता है। अंगद को युवराजपद मिलता है। प्रभु प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास करते हैं। जानकीजी को ढूंढने की योजना बनी। तीन दिशाओं में विपुल संख्या में वानर भेजे। दक्षिण दिशा में अंगद के नायकत्व में मुख्य बानर गए। मार्गदर्शक वृद्ध जामवंत है। श्री हनुमानजी आखिर में प्रणाम कर आगे बढते हैं। प्रभु ने हनुमानजी को मुद्रिका दी। वे मार्ग भूले। स्वयंप्रभा की मदद मिली। समुद्र तट पर संपाति का मार्गदर्शन मिलता है। भक्तिमार्ग में सहायक शक्तियां मिलती है। और विघ्नकारी तत्त्व भी मिलते हैं। भक्तियात्रा में काफी सहायता मिलती रहती है। पूरा मार्गदर्शन मिला स्वयंप्रभा और संपाति का। आखिर में जामवंतजी का हनुमानजी को आह्वान। 'किष्किंधाकांड' पूरा हुआ।

'सुन्दरकांड' में हनुमानजी ने लंका की ओर यात्रा की। भक्तियात्रा में सहायक और अवरोधक तत्त्व मिलते हैं। जैसे समुद्र की ओर उड़ान भरी तो मैनाक पर्वत आया। फिर सुरता, सिंहिका राक्षसी। लंका के मुख्य दरवाजे के पास लंकिनी ने अवरोध किया। हमें सहाय और अवरोध दोनों का स्वीकार करना पड़े। पर यात्रा चालु रहती है। चाहे गति धीमी हो। गाड़ी चलती रहे तो आखिरी स्टेशन तक पहुंचेगी ही। हनुमानजी लंका पहुंच विभीषण से मिले। युक्ति मिली। माँ के पास पहुंचे।

हनुमानजी अशोकवाटिका की घटा में छिपकर बैठे हैं। तब रावण सीता के पास आकर प्रलोभन-भय दिखाता है। 'मानस' के आधार पर मैं युवाओं को कहना चाहता हूं कि हमारे जीवन में भी कई तकलीफें आयेगी पर जरा उपर उठकर देखोगे तो समस्या से पूर्व समाधान मिलेगा। एडवान्स में समाधान हनुमानरूप लेकर बैठा होगा। थोडी-सी धीरज धरनी चाहिए। 'ये मुझे बाहर निकाल देंगे या सहाय करेंगे!' 'हे हरि, हे हरि' बोले तो शाखा हिलने लगेगी। या तो पूंछ नीचे आयेगी। समाधान हाजिर होता ही है। अस्तित्व का एक नियम है, पानी बनने से पहले ईश्वर किसी को प्यास नहीं देता। नहीं तो वो बेईमान कहलायेगा। उसे पहले पानी तैयार करना चाहिए। फिर प्यास देनी चाहिए। पहले अन्न तैयार करना चाहिए फिर भूख देनी चाहिए। उसी तरह परमात्मा पहले समाधान देता है फिर समस्या। हनुमानजी मिले। माँ ने आशीर्वाद दिया। हनुमानजी ने फल खाएं। वन उजाड़ दिया। राक्षस पकड़कर दरबार में ले गए। मृत्युदंड की बात की। तब विभीषण के मशवरे से अंत में पूंछ जलाने का निर्णय किया। हनुमानजी ने छलांगे मार-मार लंका जलाई है।

हनुमानजी लौटे। बातें की। सेना ने प्रस्थान किया। सभी समुद्र तट आए। रावण चिंतित है। सभा मिली है। विभीषण ने तो हित की बात की। तो उसका बहिष्कार हुआ। वह रामशरण आया। प्रभु ने स्वीकार किया। भगवान ने समुद्र तट पर तीन दिनों का अनशन किया। प्रभु का कोप देखकर समुद्र शरण में आता है। ब्राह्मण के रूप में आता है। सेतु-निर्माण का निर्णय लिया गया। प्रभु को विचार अच्छा लगा। 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध निर्मित किया। प्रभु ने प्रसन्नता व्यक्त की। फिर कहा कि मुझे यहां शिव की स्थापना करनी है। यह कैसी सुंदर संगति है! कथा तो है ही। इतिहास भी है। पर अध्यात्म भी है। शिव की वहीं स्थापना होती है जहां सेतुबंध है। जगत में जहां भी संधि और जोड़ने की बात होगी वहीं कल्याण का स्थापन होगा। अन्य जगह नहीं। रामेश्वर भगवान की स्थापना हुई। यह जीव और शिव के बीच का सेतु है। सभी समुद्र पार हो गए। सुबेल पर्वत पर प्रभु का निवास है। रावण को समाचार मिले। मनोरंजन हेतु अपने अखाड़े में जाता है। वहां किन्नर, गंधर्व, यक्ष, देवता आए हैं। संगीत की मेहफ़िल जमती है। भगवान राम ने रसभंग किया है। दूसरे दिन रामजी ने रावण की सभा में संधि का प्रस्ताव लेकर दूत अंगद को भेजा है। रामजी को लगा, समाधान होता हो तो संग्राम नहीं करना है। भारत की यह कायम नीति रही है। 'महाभारत' में तो संधि के लिए साक्षात् हरि गए है।

मैं आज एक बजे पूरा कर के जाऊंगा। बिनती करता हूं कि यहां इस विस्तार में अमुक ज्ञातियों में बैर है। प्रतिशोध लेते रहते हैं। पुलिस के प्रयत्न सफल नहीं होते। गुरुजन नहीं चाहते कि ये सब हो। एक साधु की बात सुनकर, कथा सुनकर संकल्प कीजिए कि हम यह सब भूलकर एक हो जाय। ये सब छोड़ दे। कुछ फायदा तो है नहीं। परस्पर मारपीट का क्या फायदा? यह कब तक चलेगा? क्या इसमें चामुंडा प्रसन्न है? मैं कथा की कोई

दक्षिणा नहीं लेता। आप इतना सोचेंगे तो मैं प्रसन्न रहूंगा। समझदार वर्ग तलगाजरडा आए और कहे बापू, आप थान आईए। बात करो। समाधान हो। मैंने कहा, प्रसंग पर जरूर आऊंगा। आज अवसर मिला है। विराट सभा के सामने एक साधु का नम्र निवेदन है। ऐसा होना चाहिए। उस दिन नौरात्रि का सच्चा फल मिलेगा। दशहरा उज्ज्वल लगेगा। भीतर का रावण अब मरना चाहिए। ये सब कहां तक? किस भव के लिए? इस पांचाल प्रदेश के कितने देवता, सिद्धपुरुष कैसे बलिदानी हुए? 'घण रे बोले ने एरण सांभळे', यह लिखनेवालें मेघाणी भी यहीं के है। एक-दूसरे को मान दे। अच्छे समाचार मिलने पर मेरा तलगाजरडा प्रसन्न होगा।

राम का यह प्रयत्न विफ़ल रहा। संघर्ष निर्मित बना। भगवान ने एक के बाद एक सब को निर्वाण दिया है। आखिर में 'राम' शब्द के उच्चारण के साथ रावण भी निर्वाण पाता है। आसुरीतत्त्व का विनाश होता है। भगवान ने विभीषण को राज्य सौंपा। प्रभु जानकी के साथ पुष्पक में अयोध्या की यात्रा करते हैं। हनुमानजी अयोध्या में समाचार देते हैं। हवाई जहाज शृंगबेरपुर उतरता है। प्रभु आदिबासी, भीलों के पास आए। प्रभु केवट से गले मिले और प्रभु ने केवट को बिठाया।

हनुमानजी अयोध्या पहुंचते हैं। 'लंकाकांड' पूरा हुआ। भरतजी विरहदशा में प्राण छोड़ने की तैयारी में थे। डूबते हुए को जहाज मिले उसी तरह हनुमानजी मिल गए। कहा, 'धैर्य रखिए। राम-लक्ष्मण-सीता सकुशल पधार रहे हैं। हवाई जहाज अयोध्या की परिकम्मा कर सरयू तट पर उतरा है। तुलसीजी कहते हैं, बानर, भालू, राक्षस-विभीषण सब उतरे तब मनुष्यदेह में थे। 'धरे मनोहर मनुज सरीरा।' 'रामायण' माने बानरों की चंचल वृत्ति में से, आसुरी वृत्ति में से मानव बनाने की फार्म्यूला। रामजी दौड़े। धनुष-बाण फेंककर गुरुजी के चरण में दंडवत् किया। राम ने संदेश दिया कि जब तक जरूरत थी शस्त्र रखे, अब उसे छोड़कर शास्त्रधारी के पैर पकड़ता हूं।

प्रभु ऐश्वर्यसहित अमित रूप धारण कर व्यक्तिगत मिलते हैं। सबसे पहले लज्जित कैकेयी से मिले। उनके संकोच को दूर करने चरण स्पर्श किया। कहा, 'माँ, यह आपका प्रताप है कि मैं आज अलग रूप लेकर आया हूं। यदि आपने मुझे बन न भेजा होता तो कैसे पता चलता कि पत्नी, सेवक और शत्रु कैसे होते हैं? विश्व को रामराज्य न मिलता।' आप भी कथा सुनकर जो रूठे हुए हैं उनके घर क्यों न जाय? तब 'रामायण' चरितार्थ होगी। भाई-भाई से कहे, 'चल मुकद्दमा वापिस ले ले। सब भूल जाए। हमने 'रामायण' सुनी है।' ऐसा होगा तब समाज अच्छा लगेगा। धीरे-धीरे हम ऐसा करे। प्रभु कौशल्याभवन आए हैं। वशिष्ठ आदि पधारे हैं। दिव्य सिंहासन मंगाया। राम सत्ता के पास नहीं गये, सत्य के पास सत्ता आई है। दिव्य वस्त्रालंकार पहने हैं। राम-जानकी पृथ्वी, सूर्य, दिशाओं, परिवारजनों, माताओं, वशिष्ठ आदि ब्राह्मण देवताओं को प्रणाम कर विनम्रता से गद्दी पर बैठे। विश्व को प्रेमराज्य देते तुलसीजी लिखते हैं-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिलोक में जयजयकार हुआ है। छः माह बीते। प्रभु ने हनुमानजी के सिवा सभी मित्रों को कर्तव्य करने बिदा दी है। जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया है। तुलसी ने इसके बाद की कथा नहीं लिखी। जिस प्रसंग में विवाद है, दुर्वाद है; जिस प्रसंग में अपवाद है ऐसे प्रसंग नहीं लिखे। तुलसीजी को सीयाजी का दूसरा बनवास अभिप्रेत नहीं है। मैं भी उस कथा में नहीं जाता। वारिसों के नाम बता दिए। फिर कागभुशुंडि की कथा है। गरुडजी भुशुंडि के पास आते हैं। रामकथा सुनते हैं। सात प्रश्न खड़े होते हैं। समाधान पाकर वैकुंठ जाते हैं। कथा को विराम देते हैं। शिवजी भी पार्वती के सामने कथा को विराम देते हैं। याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी के पास कथा को विराम देते हैं या नहीं यह स्पष्ट नहीं है। मुझे लगता है गंगा-जमना और सरस्वती का प्रवाह बहता रहेगा तब तक कथा जारी रहेगी। यदि हम श्रवण कर सके तो। तुलसी रामकथा को विराम देने जा रहे हैं। उपसंहारक सूत्रों की चर्चा कर लें।

या देवी सर्वभूतेषु शांतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

तुलसी ने दुर्गा के ऐसे कई रूपों का वर्णन 'दुर्गासप्तशती' में दिया है। प्रेक्टिकल स्तोत्र है इस में लिखा है-

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।

सब को नींद आती है। तब माँ सब में निद्रा के रूप में निवास करती है। मेरी निद्रा चामुंडा है, अंबा है; ऐसा भारत देश ही सोच सके। प्रथम रात्रि को शक्ति से शुरू कर 'शांतिरूपेण' तक पूरा करता था। माँ, तू हर जगह शांतिरूप निवास करती है। शक्ति की आखिरी सार्थकता शांति में ही है। पूरे दिन के परिश्रम का परिणाम शाम को घर की शांति में है। यह कहां-कहां है? या तो 'सर्वभूतेषु' है पर मुझे कुछ स्थान बताने हैं।

माँ कण-कण में शांतिरूपेण बैठी है। तो फिर अशांति कौन फैला रहा है? शांति का पता क्या है? आईए, 'रामायण' के आधार पर शांति का पता खोजें। शांति मन में है। माँ, तू मन में बसती है। चित्त विक्षेपहीन होना चाहिए। बुद्धि शुद्ध होनी चाहिए। अहंकार शंकर में घुलना चाहिए। मन शांति का एड्रेस है। हम कहते हैं, मन अशांत है। शरारती बच्चा भी आखिर सो जाता है। ऐसे मन चंचल और प्रमादी है। बहुत बलवान है। आखिर हम शांतिप्रिय है। शांति माने अमन। इसका अर्थ है, जहां मन शांत होता है।

दूसरा, गृहशांति। घर शांति का दूसरा ठिकाना है। यदि यहां नहीं तो कहीं नहीं। गृहशांति अच्छी बात है। अशांति हो तो घर से निकल जाते है। भले आधी रोटी हो पर सब साथ बैठकर खाना खाए। भोजन और भजन साथ मिल के करे। सामूहिक साधना होनी चाहिए। प्रेक्टिकल रहे। तीसरी, गांव की शांति है। जहां जगदंबा बिराजमान है। पूरे बृहद विस्तार की शांति। फिर देश, राज्य और विश्वशांति।

सर्वे भवन्तु सुखीनः सर्वे सन्तु निरामया।

चौथी, शून्यता में शांति। इसे जगद्गुरु 'अहम् निर्विकल्पो' कहते हैं। नीरव शांति। वैसे एक स्मशान शांति भी होती है। स्वजन के जाने के बाद घर में शांति होती है। कोने रोते हो। अग्निदाह देकर चुपचाप शांत निकलते हो यह पांचवी शांति। किसी बुद्धपुरुष के पास पांच मिनट शांति मिले ऐसी जगतभर में नहीं है। एक ऐसा महापुरुष जो सब से अलग हो फिर भी सबको अपना मानकर जीता है उनसे शांति मिलती है। वही माँ बसती है। ऐसी माँ प्रगट या अप्रगट रूप में 'सर्वभूतेषु' है। कौन बगैर शक्ति है? एक पथ्थर में भी सुषुप्त शक्ति है। हमारी शक्ति पथ्थर की शक्ति को गति देने धक्का देती है। उसके द्वारा जो फल गिरता है उसमें भी सूक्ष्म शक्ति है। शक्तितत्त्व कहीं न कहीं पड़ी है। ऐसे भिन्न-भिन्न स्वरूपों में ऋषियों ने शक्ति के दर्शन किए। तलगाजरडी आंखों ने मन चाहे दो-तीन दर्शन जोड़े हैं। खास तो 'अहिंसारूपेण संस्थिता।' 'हे जगदंबा, जगत में अहिंसारूप से व्याप्त है।'

माँ की गोद में बैठकर, मेरी व्यासपीठ माँ चामुंडा को गा रही थी। इसे जब विराम देने जा रहा हूं तब लगता है बहुत कुछ रह गया। ऐसी प्रभु की कथा की अनंतता व्यापक है। मेरी प्रसन्नता, ग्रामीण श्रोताओं की श्रद्धा, सादर 'रामायण' मैया की ओर। आपके धैर्य, शील और शिस्त को एक साधु के रूप में नमन करता हूं। सरकारी तंत्र हो, सामाजिक संस्था हो, सबने इस प्रेमयज्ञ में अपनी-अपनी जगह से व्यवस्था में जो योगदान दिया है; कथा छोड़कर सेवा में लगे योगदाताओं को साधुवाद देता हूं। संतों को मेरा प्रणाम। मेरी लोकविद्या के उपासकों, नौरात्रि में व्यस्त होते हैं फिर भी कथाश्रवण किया और अपनी विद्या का लाभ दिया। मैं आदर व्यक्त करता हूं। इस विराट आयोजन में सब निमित्त बनते हैं। बाकी कोई विराट चेतना काम कर जाती है। यह किसी आदमी का काम ही नहीं है! नौ-नौ दिनों का मंडप! इतने सारे लोग भोजन करे! सबके चहरे पर प्रसन्नता है।

सालों का मेरा मनोरथ था कि माँ चामुंडा की शक्तिपीठ में गायन करूं। जयंतीभाई और परिवार सतत कहा करे, बापू, चामुंडा की कथा मुझे ही दीजिए। इस नौरात्रि में माताजी ने योग कर दिया। यह परिवार निमित्त हुआ। अच्छी तरह से पूरा हुआ। समस्त परिवार के प्रति प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। गांव-गांव जाकर सब को मिल सका। मैं आपके पास आया, अब आप सब समय मिलने पर तलगाजरडा आईए।

रामकथा प्रेमयज्ञ में सब का योगदान मिले उसका एक बहुत बड़ा पुण्य मिलता है। और ये फल हमें नहीं चाहिए। तो आईए, हम सब मिलकर यह पुण्य फल माँ के चरणों में, नौ दिनों की कथा समर्पित करते हैं, माँ जगदंबा, तेरे चरणों में नौ दिनों की कथा अर्पण करता हूं।

यहां इस विस्तार में अमुक ज्ञातियों में बरसों से बैर है। वे प्रतिशोध लेते रहते हैं। पुलिस के प्रयत्न विफल है। गुरुजन नहीं चाहते कि ऐसा हो। कथा सुनकर एक साधु की बात सुन संकल्प करें कि हम ये सब भूल जाय, एक हो जाय। परस्पर पिटने का फायदा क्या है? यह कहां तक चलेगा? क्या इस में चामुंडा प्रसन्न है? मैं कथा की कोई दक्षिणा नहीं लेता। आप इतना सोचेंगे तो खुशी होगी। ऐसा होना चाहिए। उस दिन नौरात्रि का सच्चा फल मिलेगा। दशहरा उज्जवल लगेगा। अपने भीतर का रावण मरना चाहिए।

मानस-मुशायरा

बिस्तर बांध लिया है मैंने 'गालिब',
बताओ कहां रहते हैं वो लोग जो किसी के नहीं रहते।
– गालिब

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।
– [illegible]

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।
– ज़हूर आलम

सितारों को आंखों में महफ़ूज रखना।
बहुत दूर तक रात ही रात होगी।
मुसाफिर है हम भी मुसाफिर हो तुम भी,
किसी मोड पर फिर मुलाकात होगी।
– बशीर बद्र

वो जहां भी रहेगा रोशनी फैलाएगा।
चरागों को कोई अपना मकां नहीं होता।
– वसीम बरेलवी

उसने देखते ही दुआओं से मुझे भर दिया।
मैंने तो अभी सजदा भी नहीं किया था।।
-राज़ कौशिक

क्वचिदन्यतोऽपि

इक्कीसवीं सदी में शिक्षण कार्य पंचधूनी की तपस्या जैसा है

'शिवम् प्राथमिक विद्यालय' लोकार्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रेरक वक्तव्य

सब से पहले पैंतीस मिनट देरी से पहुंचने के लिए क्षमाप्रार्थी हूं। मेरा स्वभाव है कि वक्त पे पहुंच जाऊं। पर आसपास में बहुत जल्दी आ गया था अत: लौट गया। मेरे प्रति आदर है; मैं देरी से आऊं तो भी आप सादर सह लेते हैं पर मुझे पीड़ा यह होती है कि छोटे-छोटे बच्चे शायद दो घंटे से बैठे होंगे। उन्हें सहना पड़ा होगा। मेरा प्रथम संबोधन बच्चों के प्रति है। उन्हें मेरे वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद। 'शिवम् विद्यालय' के प्राथमिक स्कूल के सभी शिक्षक भाईयों-बहनों, आचार्यश्री, सरपंचश्री, तीन गांवों की संयुक्त पंचायत यहां है। उपसरपंचश्री, गांव के भाईयों-बहनों, मंचस्थ आदरणीयजन, सब का अभिवादन करता हूं। सर्व प्रथम मुझे दो माताओं को प्रणाम करने हैं। वाल्मीकि समाज की एक माता अपने बच्चों को पढ़ाकर कितनी प्रगति करवाई। ऐसी वाल्मीकि समाज की माताजी की वंदना की। प्रणाम करता हूं। दूसरी कोल समाज की बहन, उन्होंने भी अपने बच्चों के लिए बड़ा काम किया। उन्हें भी प्रणाम। ऐसे शुभ अवसर पर हमारे मंचस्थ गुरुजन अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने, शुभेच्छा देने आए हुए सभी गुरुजनों को और मस्कत से आए अश्विनभाई जिन्होंने

हमारा सन्मान किया। अन्य सन्मानित सभी गुरुजन। सविताबहन की पुस्तक लोकार्पित हुई उसके प्रति सादर प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। इस गांव में आने का मौका देनेवाले मकवाणासाहब और भरतभाई; यह मैं प्रशंसा की खातिर नहीं कहता। सचमुच मैं लाभान्वित हुआ हूं। मुझे गांवों में जाना अच्छा लगता है। सींव माने फार्महाउस नहीं। मैं स्वभावत: शिक्षक हूं और स्कूल में लोकार्पण अवसर पर आया यह मेरे लिए लाभ की बात है। इसका मुझे आनंद है। नहीं तो इतने सारे लोगों के दर्शन मैं शायद नहीं कर पाता।

यहां नरसिंह महेता के सुंदर पदों का रास बेटियों ने रचा, 'धन्य आजनी घडी ते रळियामणी।' अच्छी घडी हंमेशा आज की ही होती है। बीते कल की घडी संस्मरण है। अभी साहब 'गीता'श्लोक रखकर ज्ञान की चर्चा करते थे। आज की घडी विद्या और शिक्षण की है। उसमें हम मोती ठीक तरह से पीरो ले तो आनेवाले कल की घडी अच्छी ही होगी। ऐसे एक छोटे से गांव को अच्छी स्कूल मिली। हमने रास्ते में कई स्कूल देखी। मैंने यह एक सुंदर-सात्त्विक बिल्डिंग देखी। आदतन मैं वर्ग में भी गया। रामकृपा-रामकथा की कृपा से, आप सब की शुभकामना से पूरे देश-विदेश में घूमना होता है। कुछ प्रांतों में कोलेज बिल्डिंग से भी अधिक सुंदर प्राथमिक स्कूल के मकान बने हैं। कोई न कोई दाता योगदान देते हैं। यह जानीभाई, मस्कत से अश्विनभाई; उनके मस्तक में यह विचार डाला। मैंने 'मानस-मस्तक' पर कथा की है। उन्होंने यथायोग्य सेवा दी। मकवाणा साहब, मैं फेइस रीडिंग करता हूं और मुझे ये सब रजोगुणी नहीं, सात्त्विक लगता है। यह मेरी फीलिंग है। इस सात्त्विकता का नाश न हो इसका ध्यान शिक्षकगण और आचार्यों को रखना है। बच्चें तो निर्दोष होते हैं। जैसा मोड़ देना चाहे दे सकते हैं। सात्त्विकता बरकरार रहनी चाहिए। चाहे प्राथमिक-माध्यमिक स्कूल हो, कोलेज हो या युनिवर्सिटी हो पर इक्कीसवीं सदी का शैक्षणिक कार्य पंचधूनी जैसा है। बैसाख में कडी धूप हो और महात्मा, तपस्वी अयोध्या के महात्मा गांव में आए, पंचधूनी का तप करे। चारों ओर उपलों का भठ्ठा करे, बैठे, यह पंचधूनी की तपस्या है। पर हमें नहीं करनी है। आज प्रासंगिक भी नहीं है। ये महापुरुष ही कर सकते हैं। उन्हें प्रणाम। अभी शैक्षणिक-विद्या का कार्य पंचधूनी तपने जैसा है।

महाराजा कृष्णकुमार युनिवर्सिटी, भावनगर के पूर्व वाइस-चान्सेलर ने अपना अनुभव कहा कि जो वितरित करना था उसका व्यापार हो रहा है! यह शुरूआत ऊपरी स्तर से होती है। आज प्रायमरी स्कूल में तो कोई प्रश्न ही नहीं है। पर बड़ी स्कूलों में और आगे बड़े पैमाने पर सब बिकता है। पहले विद्यापीठ होती थी पर आज दुकानें बन गई है। जहां व्यापार चल रहा है। साहब, डोनेशन देकर जो पढ़ते हैं, बाद में वह वसूल कर लेता है! डोनेशन देकर एड़मिशन लिया है तो फ़िर वह वसूल करेगा ही! मायाभाई कहते हैं, 'बापू, मेरी स्कूल नुकसान में है। बैंक से लोन लेकर पूरा करता हूं।' शिक्षण पंचधूनी का यह पहला तप है, साहब! यह कमाई का साधन न बने। तो ही हम कुछ दे सकते हैं। प्रायमरी स्कूल में तो शिक्षक पढ़ाते हैं। झूठी लीव नहीं लेते। रीपोर्ट दे फ़िर अंदर-अंदर के समझौते से लीव रीपोर्ट फ़ाड़ ड़ाले! ऐसा ये नहीं करते। यह कमाई का साधन नहीं है। यह पहला तप है। यह कमाई का साधन नहीं है। पर यह भीतरी कमाई का तप है। प्रायमरी संस्था से ही ये करना पड़ेगा। एक विद्वान ने पूछा, 'आप कौन-सी कथा करते हैं?' मैंने कहा 'रामकथा।' मुझे नापने की परीक्षा ले रहे थे! पर हमें पता तो चल ही जाय। फ़िर पूछा 'वाल्मीकि

रामायण?' मैंने कहा, 'तुलसीकृत रामायण।' फ़िर कहा, 'ठीक। आसान पड़े न इसीलिए। वो 'रामायण' तो संस्कृत में है न?' यूं मुझ पर व्यंग्य कर लिए! बात भी ठीक है। मैंने कहा, 'मैं ठहरा प्राइमरी स्कूल टीचर। हम ठीक पढ़ाकर भेजें और युनिवर्सिटी तक पहुंचते हैं। यहां केवल सात कक्षा है। मैं सात कांड की 'रामायण' लेकर मैं प्रायमरी स्कूल में काम करता हूं। कितने युनिवर्सिटी में पहुंच गए हैं इसका मैं साक्षी हूं।

पंचधूनी सेंककर जो शिक्षक तैयार करेंगे उसमें गुरूजनों की क्षमता का योगदान रहेगा। इन्होंने ठीक कहा कि गांव के दाता एक दिन की कमाई दान करे। यह अच्छी बात है। यह अच्छा संकल्प है कि प्रत्येक परिवार एक दिन की आय देकर स्कूल का स्तर अधिक दिव्य बने ऐसा करे। यह होना चाहिए। कठिन नहीं है। मैं जब पढ़ता था तब हाईस्कूल के आचार्य कहते थे कि युनिवर्सिटी के परिणाम खराब निकले तो कहा जाता था कि ये हाईस्कूल के कुछ पढ़ाते ही नहीं है! उन्हें यह कहे कि आप को लेकर यह हो रहा है तो ये कहेंगे इसमें हमारा कोई दोष नहीं है, प्राइमरी स्कूल का दोष है। वे प्रवास में ही ले जाते हैं! प्रायमरी स्कूलवालें बालमंदिर का दोष कहेंगे! उन्हें कहे तो जवाब मिलेगा, माँ-बाप ध्यान नहीं देते हैं, हम क्या करे? फिर सब कुछ भगवान के सिर पर जाता है। उन्होंने ऐसे बच्चें दिए!' किसीको जिम्मेदारी लेनी नहीं है। सब उस पर ड़ाल देना है। माँ-बाप से लेकर युनिवर्सिटी के वाईस चान्सेलर और मूल चान्सेलर तक जाता है। किसीके ऊपर ड़ालने से अपनी-अपनी जिम्मेदारी वहन करना यह शिक्षणक्षेत्र की पंचधूनी का दूसरा तप है। यह हमें करना पड़ेगा।

तीसरा तप प्रयोग का है। मैं तो प्रासइमरी स्कूल का शिक्षक रहा हूं। पाठ देने पड़ते थे। सब प्रेक्टिकल कराना होता था। पी.टी.सी. करनेवालों को पता है कि हेतुकथन निकलवाना होता था। यह सब करना होता था। मास्टर स्कूल में गए। एक बोतल ली। उसमें पानी भरा। विद्यार्थीओं को पूछा, यह क्या है? तो कहे, 'यह बोतल है।' फ़िर बोतल को औंधी की। पूछा, 'यह मैंने क्या किया?' कहा, 'आपने बोतल औंधी की। 'इसमें क्या भरा है?' 'पानी।' बोलत में से एक बुंद गिरी। पूछा, 'यह क्या गिरा?' कहा, 'बुंद है।' फ़िर कहा, अब हम टीपु सुलतान के बारे में बात करेंगे।' ऐसा करना पड़े! सोक्रेटीस कहते थे, मैं किसीको कुछ दे नहीं सकता। उसके अंदर जो पड़ा है उसे उजागर करता हूं। दाई किसीके गर्भ में जीव नहीं रख सकती। उसका एक ही काम है, नौ माह तक जो गर्भ में पड़ा है उसे अनावृत्त करना। उसी तरह हर एक बच्चे में जो क्षमता पड़ी है उसके प्रागट्य को लेकर प्रयोग करना; पूरा प्रामाणिक प्रयत्न करना मेरी दृष्टि से शिक्षणक्षेत्र में तीसरा तप है।

शिक्षण का कार्य स्कूल रूम में ही पूरा नहीं होता। उसके बाहर भी शिक्षण कार्य होता है। मैं कितने ही निवृत्त शिक्षकों को जानता हूं जो विद्यार्थीओं को घर बुलाकर पढ़ाते हैं। वयनिवृत्ति अलग बात है। खचाखचभरे लंदन के स्टेड़ियम में फूटबोल मेच दौरा युरोपियन लड़कें लड़कियों को छेड़ रहे थे। इसे देखकर एक वरिष्ठजन ने दोनों लड़कों के कालर पकड़कर दो-दो तमाचे जड़ दिए! किसीने पूछा, 'क्यों मारा?' कहा, 'मैं एक लश्कर का निवृत्त अफ़सर हूं। मेरे इर्दगिर्द अशिस्त कैसे सहन कर लूं? मैं आर्मीमेन हूं।' 'पर आप को क्या लेना-देना? आप तो निवृत्त है।' उन्होंने सरस जवाब दिया, 'मैं निवृत्त हूं, पर एक्स्पायर नहीं हूं। अत: मैं अशिस्त सहन नहीं सकता।' यह चौथा तप है। शिक्षक

कभी निवृत्त नहीं होता। वह निवृत्त नहीं होता। वह अपने ढ़ंग से शिक्षण और विद्या को बांटता है। पांचवां तप; अभी मकवाणासहब ने कहा, आंबेडकरसाहब को याद किया; एकसो पचीसवीं जयंती मनाई; स्वयं को शिक्षित करना है। क्या हम नहीं कर सकते? मुझे तो 'वंचित' शब्द भी पसंद नहीं। 'उपेक्षित' शब्द भी कब तक? ठीक है, कहना पड़े। वे शब्द तो निकल ही गए, अल्लाह की बड़ी महेरबानी! फ़िर 'दलित' शब्द आया। गांधीबापू ने 'हरिजन' शब्द दिया। किसीको वंचित कहते मैं घबरा जाता हूं। क्यों वंचित? यदि हम में ईमानदारी नहीं है तो हम भी वंचित है। हम प्रामाणिक नहीं है और शोषण करते हैं तो हम भी वंचित है।

विनोबाजी की पदयात्रा में रविशंकर महाराज डांग जिल्ले की पदयात्रा में घूम रहे हैं। एक आदिवासी के झोंपड़े में दादा धर्माधिकारी के साथ विनोबाजी की ठहरने की व्यवस्था देखने गए। कहे, और तो सुविधा नहीं चाहिए। उन्होंने मिट्टी से और आक के फूलों से घर सजाया था। सब ठीकठाक था। एक कुटियां तैयार की थी। दादा धर्माधिकारी ने पूछा 'इसमें दरवाजा नहीं है। चोर नहीं आते?' कहा 'ना, ना चोर यहां आते ही नहीं।' 'पुलिस तो आती ही होगी।' कहा, 'पुलिस आए। भले चोर न आए। शहरवाले चोरी करे तो उसे मारने के लिए पुलिस यहां आती है!' समाज को इस दशा से बाहर निकालना हो तो खुद को शिक्षित करना होगा। उन्हें शिक्षित किए तब इतना बड़ा काम हुआ। हमें अपने उपेक्षितपद से बाहर निकलना होगा। यह बड़ा कठिन तप है। स्वयं शिक्षित हो। यह माँ का बेटा अमरिका कैसे पहुंचा? कहां-कहां पहुंचा? कितना बड़ा काम? मैं प्रसन्न हूं कि हमारे यहां शिक्षण का विकास हुआ है। बेटियां पढ़ रही है। लड़कों को पढ़ाएं।

महावीर स्वामी तीर्थंकर ऐसा कहते थे कि तू तेरे समाज के लिए दान देता है तब तक सज्जन है। पर दूसरे समाज के लिए दान देगा तो तू महाजन है। ऐसे ही महाजन नहीं बन सकते। आख़िरी आदमी तक तू पहुंच। गांधीबापू की यही संकल्पना थी, प्रतिज्ञा थी। मेरी व्यासपीठ का भी एक ही मनोरथ है कि यह आख़िरी आदमी तक पहुंचनी चाहिए। इसीलिए मैं सींव में-झोंपड़ें में जाता हूं। वक्त मिलने पर पहुंच ही जाता हूं। अभी लोकभारती सभागृह में एवोर्ड देकर निकल रहा था तो हम एक झोंपडे में गए। मकवाणासहब, हमने गंगाजल देकर कहा, 'बहन, हमारे लिए चाय बना दीजिए।' समाज द्वारा लदी गई लघुताग्रंथि के बोझ से बहन ने कहा, मैं इसे छू सकती हूं? यह पवित्र जल है। हम चाय बनाकर बापू को पिलाए तो हमारे बच्चें बीमार पड़ जाय! कल्पना कीजिए, कौन बड़ा, यह बापू या वो बाई?

सचमुच वह बाई बड़ी है जिनको ऐसे विचार आते हैं।

मुझे बराबर अनुभव है कि बरसों पहले हम डीसा या पास के गांव में गए थे। हमारे साथ लालबापू थे। एक तालाब के किनारे मेरी झोंपड़ी थी। तालाब के सामने रोज एक दीया प्रज्वलित रहे। कथा के तीसरे-चौथे दिन देखा कि वहां दीया नहीं था। मैं झूले पर से देख रहा था दीया क्यों नहीं है? केरोसीन नहीं होगा? कहीं बाहर गए होंगे? दूसरे दिन एक भाई से कहा, जरा तलाश कीजिए, पूछ आइए। कुछ जरूरत हो तो दे आईए। दे आए। उसने कहा, 'बापू ने इतनी खबर ली!' खुश हुए। मैंने कहा, 'कल मैं उनके यहां रोटी खाने जाऊंगा। आप गंगाजल दे आईए। मैंने यहां मना कर दिया कि मेरी रसोई मत बनाईयेगा। मैं वहां खाना खाने जाऊंगा। मैंने साथ के संतों से कहा, आप भी आईए हिंमत हो तो! कहा, 'आप जो करते हैं उसमें हम सहभागी है। पर आख़िर में सब भाग निकले! किसीने कहा, 'काम है!' 'संध्या बाकी है!' मैंने कहा, मेरी तो यही संध्या है। शायद कार्यरत होंगे! मेरे साथ नहीं आए। पर वे लोग मुझे वक्त पे न बुलाए! मैंने यहां ना कह दी थी! मैंने आदमी को भेजा। लौटकर कहा, रसोई नहीं बनाई! वे कहे, 'बापू, हम अपने हाथ की रोटी खिलाए तो हमारे बच्चें बीमार पड़ जाय! हमारे घर में आफ़त आ जाय!' ऐसा ड़र कैसे निकाले? मैं गया। उनको मनाकर समझ दी। हमें इस हद तक जाना पड़ेगा। मैं कहता हूं, इस मंच पर जितने बैठे हैं, सभा पूरी होने पर जो आख़िरी होगा वही प्रथम होगा। जिसे हम आख़िरी गिनते हैं वही प्रथम होता है। प्रथम मुक्ति उसे ही मिलेगी। मुक्ति की बातें करनेवाले को तो बाद में मिलेगी। गांव-गांव ऐसे सात्त्विक विद्यालय हो। उसमें शिक्षक भाई-बहनों की काफ़ी जिम्मेदारी होती है। यही पंचधूनी का तप है। ऐसा समझकर काम करे तो अच्छा परिणाम मिले।

इस गांव की एकता देखकर खुशी हुई। पूरी दुनिया हिन्दु-मुस्लिम की बातें करती है। मन्नत लेकर आए तो पहले पीर का करना पड़े; दरगाह की मन्नन पूरी करे। यह एकता कौन लाया? चार सौ-पांच सौ साल बीत गए। अभी तो हम एकता लाने के व्यर्थ नारे लगाते हैं सिर्फ़ फ़ोटो खींचवाने और टी.वी. पब्लिसिटी के लिए! यह कौन कर गया? हिलमिल कर रहे तो कितना बड़ा मेसेज मिलता है? कितना बड़ा काम हो रहा है? गांव में शिक्षण का फैलाव हो। हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हूं कि ऐसी सात्त्विक प्रवृत्ति सदा विकसित होती रहे। अश्विनभाई के परिवार ने इसमें योगदान दिया उन्हें नमन। आप सब देते रहेंगे। रामजी मंदिर हो या अन्य, हम अन्नकूट धरते हैं। पूरे गांव ने योगदान दिया हो; पूजारी ऐसा न कर सके क्योंकि उस बेचारे के पास क्या है जो दे सके। वह तुलसीपत्र ड़ाल दे। और तभी प्रभु स्वीकार करते हैं। नहीं तो अन्नकूट अधूरा रह जाता है। हम तो मंदिर के साधु-पूजारी! आप सब ने मिलकर सुंदर काम किया है। ठाकोरजी को स्वीकारने की इच्छा हो जाय ऐसे एक अन्नकूट जैसे विद्यालय को आप लोकार्पित कर रहे हैं तब तलगाजरडा के एक साधु के रूप में, हनुमानजी की प्रसादीरूप में पांच हजार रूपये का तुलसीपत्र समर्पित करता हूं। प्रार्थना है कि इसका स्वीकार कीजिए। यह तुलसीपत्र है जो आप के पात्र में समर्पित करता हूं।

(शिवम् प्राथमिक विद्यालय, वेलण (कोडीनार) के लोकार्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रासंगिक प्रवचन : दिनांक ९-१२-२०१५)

सांध्य-प्रस्तुति

लक्ष्मण बारोट

कीर्तिदान गढवी

भारतीबेन व्यास

ओसमान मीर

देवराज गढवी

मोरारदान गढवी

अनुभा गढवी

परसोत्तम परी

देवराज गढवी (नानो डेरो)

हकादान गढवी

राजभा गढवी

दिगुभा चुडासमा

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

॥ जय सीयाराम ॥